अध्याय छठा

स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य काव्यों में अर्थ विषयक समय बोध

6.1 अर्थ : स्वरूप और महत्त्व

साघारण शब्दों में अर्थ का अभिप्राय धन सम्पत्ति आदि चीजों से लिया जाता है। अर्थ का तात्पर्य उन वस्तुओं से है जो एक ओर तो उपयोगी हैं और जिनका विनिमय हो सकता है। जो वस्तु खरीदी बेची नहीं जा सकती, उसे सम्पत्ति नहीं कह सकते है। चाहे वह मनुष्य के लिए कितनी ही उपयोगी क्यों न हो – ''अर्थशास्त्र के अनुसार मित्र, पशु, भूमि, धन आदि की प्राप्ति और वृद्धि सब धन एवं अर्थ कहलाते हैं।''[1] अर्थ का मनुष्य जीवन में प्रमुख स्थान है क्योंकि मनुष्य जन्म से ही कुछ ऐसी मूलभूत आवश्यकताएँ एवं प्रवृत्तियाँ लेकर आता है। जिनकी संतुष्टि के लिए उसे आर्थिक सन्दर्भ में प्रवेश करना पड़ता हैं। धर्म, दर्शन कला, विज्ञान साहित्य आदि सभी क्षेत्र संस्कृति के इतिहास में उत्तरोत्तर महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करते हैं। लेकिन इन सबकी आधारशिला मनुष्य की आर्थिक स्थिति है। भारतीय दृष्टिकोण के अनुसार अर्थ की गणना उन चार परम पुरूषार्थो में की जाती है। जिनकी और मनुष्य का ध्यान सदा रहना चाहिए। ''इन पुरूषार्थो में अर्थ को धर्म के बाद दूसरा स्थान मिलता है। और जिन्होंने अपनी सारी जिंदगी धर्म को समर्पित कर दी थी ऐसे लोग भी धर्म, काम और मोक्ष की सिद्धि के लिए अर्थ को आवश्यक मानते है।''[2] बृहत हिन्दी शब्द कोश के अनुसार अर्थ – ''धन, शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन, पैसा कमाना जो जीवन के चार पुरूषार्थो में से एक माना गया है।''[3]

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है सामाजिक प्राणी होने के नाते मनुष्य की विभिन्न प्रकार की आवश्यकताएँ होती है, जिन्हें पूरा करने तथा अपने जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए व्यक्ति को धन की आवश्यकता होती है। धन की जीवन में विविध भूमिका रही है। संसार में मनुष्य के जन्म लेते ही अथवा उसे जन्म लेने के लिए भी धन की आवश्यकता पड़ती है। धन से ही गर्भास्त शिशु के सही पोषण के लिए साधन जुटाए जा सकते है। वरना धन के अभाव में गर्भावस्था में उचित खान–पान न मिलने से कई बार शिशु की मौत हो जाती है।

आधुनिक समाज में यह मत प्रचलित है कि आर्थिक स्थिति के अनुसार ही व्यक्ति के संस्कार, उनकी बुद्धि, उनका हृदय गठित और परिवर्तित होता है। यह सामान्य अनुभव है कि समाज और समाज में रहने वाले व्यक्ति का सम्पूर्ण जीवन अर्थ व्यवस्था पर निर्भर करता है। अर्थ जीवन में महत्वपूर्ण होते हुए भी साधन है। साध्य नहीं। भारतीय अर्थ व्यवस्था में उचित माध्यम एवं परिश्रम से कमाए गए धन को ही महत्त्व दिया जाता है। अनुचित या अनैतिक

---

[1] सम्पा॰ द्वारका प्रसाद शर्मा, संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ पृ॰.49
[2] तुलसीदास, कवितावली, उत्तरखण्ड, पृ॰.207
[3] सम्पा॰ कालिकाप्रसाद व अन्य, बृहत् हिन्दी कोश पृ॰.87

तरीकों से कमाए गए धन को या कमाने वाले समाज को हेय की दृष्टि से देखा जाता है। अतः अर्थ के स्वरूप के संदर्भ में कहा जा सकता है कि मनुष्य के पास तमाम वह सम्पत्ति या द्रव्य जो उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है जैसे – रूपया, पैसा, भवन, भूमि, मशीन, कारखाने, अनेक वस्तुएँ, पशु, गाड़ी आदि सभी अर्थ के विभिन्न रूप हैं। लेकिन आज के संदर्भ में अर्थ रूपये में परिवर्तित हो गया है। लेकिन उपुर्यक्त सब साधनों के माध्यम से ही रूपया कमाया जाता है। वस्तुएँ भी रूपयों से ही खरीदी जाती है। अतः ये सारी वस्तुएँ अर्थ का ही स्वरूप कही जा सकती है।

अर्थ का प्रभाव व्यक्ति के समूचे जीवन पर पड़ता है। जब से मनुष्य के मन में धन के लालच ने जन्म लिया है, तभी से उसने दूसरों का शोषण प्रारम्भ कर दिया है। इस विषय में डॉ॰ एम॰ के॰ गाडगील का मन्तव्य हे कि – ''सम्पत्ति से रिश्ते जोड़े जाते हैं तथा तोड़े भी जा सकते हैं। सम्पत्ति आत्मोन्नति का साधन बनती है। व्यक्ति का सामाजिक दर्जा भी सम्पत्ति पर आधृत होता है।[4] धन का संचय करने से ही विशेष वर्ग के पास अत्यधिक मात्रा में धन संचित हुआ तथा अन्य वर्ग का आर्थिक शोषण होने के कारण वह निर्धन हो गया। पूँजीवादी व्यवस्था के कारण धनवान व्यक्ति अधिक धनवान हो गया और निर्धन व्यक्ति अधिक निर्धन होता गया। सम्पूर्ण विश्व को चलाने वाली राजनीति की उथल–पुथल के पीछे भी धन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। आधुनिक समय में मनुष्य की सभी इच्छाएँ, आकाक्षाएँ, आवश्कतयाएँ अर्थ के चारों और घूमती नजर आती है। अर्थ का हमारे जीवन में महत्व बहुत बढ़ गया है इसके बिना वर्तमान समय में जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। आधुनिक युग में भौतिक विकास के साथ–साथ धन का महत्व बहुत बढ़ गया है। यदि सम्यक् दृष्टि से देखें तो कहना गलत न होगा कि आज की सभ्यता अर्थ तन्त्र पर टिकी हुई है। विकसित एवं विकासशील देशों को अलग करने का आधार भी अर्थ ही है। आर्थिक व्यवस्था हमारी सांस्कृतिक, सामाजिक जीवन, राजनीतिक स्थिति को गहनता से प्रभावित करती हैं इस प्रकार अर्थ का जीवन में बहुत महत्व होता है।

6.2 अर्थ की विविध भूमिकाएँ :

वर्तमान समय में व्यक्ति की इच्छाएँ पहले से अधिक बढ़ती जा रही है। आज का प्रत्येक व्यक्ति लखपति एवं करोड़पति बनने के सपने संजोए रहता है। भौतिक वस्तुओं के प्रयोग और प्राप्ति की चाह ने तथा बहुत कम समय में बहुत ज्यादा करने की इच्छा ने मानव की संवेदनाएं छीन ली है। अतः जो महानगर हमें सुख सुविधाएँ प्रदान करते हैं उनमें मानवीय मूल्यों का ह्रास भी सर्वप्रथम होता है। वर्तमान मनुष्य केवल अर्थ को ही महत्त्व देता है उसके लिए

[4] डॉ॰ के॰ गाडगील, हिन्दी एकांकियो में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति, पृ॰.34

भौतिक सुविधाएँ ही उसके जीवन का पर्याय बन चुकी हैं। चर्चित साहित्यकार यशपाल ने भी अर्थ की भूमिका के वैशिष्ट्य को स्वीकार करते हुए वक्तव्य दिया है कि – ''जीवन का आधार भौतिक अथवा आर्थिक है। समाज की भावनाओं, रीति–रिवाजों, नैतिकता की बुनियादों तथा उसके विविध रूपों का भी नियमन मानव जीवन की भौतिक और आर्थिक परिस्थितियों और भौतिक तथा आर्थिक ढांचें के अनुरूप होता है।''[5] मनुष्य की तीन मूलभुत आवश्यकताएँ रोटी, कपड़ा और मकान अर्थ पर आधारित है। दुख की बात है कि आधुनिक शोषित मनुष्य की ये तीनों आवश्यकताएँ अधूरी हैं। आर्थिक अभाव से पीड़ित मनुष्य मानसिक रूप से कमजोर एवं निर्बल हो गया है और दुर्बलता का शिकार व्यक्ति ऐसा कार्य कर बैठता है जिसे समाज हेय की दृष्टि से देखता है। भूख आदमी को कोई भी घृणित कार्य करने पर मजबूर कर देती है। इसका जीवंत उदाहरण हम प्रतिदिन समाज में हो रहे घृणित अपराधों के रूप में प्रत्यक्ष रूप से देख सकते हैं।

वर्तमान समय में हमारा बोध जीवन को परिचालित नहीं कर रहा अपितु हमारी आर्थिक व्यवस्था जीवन को चला रही है। अर्थ ही समाज में हमारे संबंध निर्धारित करता है। अर्थ ही आज वह ताकत बन चुकी है जो समाज में व्यक्ति को इज्जत, रूतबा एवं पहचान दिलाता है। वर्तमान समय में मनुष्य का जीवन केवल रोटी, कपड़ा और मकान तक सीमित नहीं है, बल्कि आज मूलभूत आवश्यकताओं के मायने बदल गए हैं रोटी से अभिप्राय मात्र सूखी रोटी खाने से नहीं है बल्कि समाज में रहने के लिए उन सब चीजों की ओर इंगित करता है जो एक मानव को घर से बाहर लाकर समाज में खड़ा करने में सहायक है। जैसे – अच्छे मकान एवं वस्त्रों के साथ–साथ व्यक्ति के पास वाहन कार या स्कूटर एवं घर में भी भौतिक सुविधाओं का होना आज अनिवार्य सा हो गया है समाज में एक उचित स्थान पाने के लिए यह आवश्यकता प्रतीत होती है। अर्थ की इन्हीं भूमिकाओं को ध्यान में रखते हुए कविवर डॉ॰ नगेन्द्र का मन्तव्य इस प्रकार है – ''अर्थ व्यवस्था की नीवं पर मानव की विभिन्न बौद्धिक और रागात्मक प्रवृत्तियों अर्थात दर्शन, विज्ञान, धर्म, संस्कृति तथा कला–साहित्य आदि की अधिसंरचना होती है।[6] धन के कारण ही मनुष्य प्रत्येक क्षेत्र में अपना सक्रिय योगदान दे पाता है धन अभाव में तो व्यक्ति अपनी दो वक्त की रोटी भी मुश्किल से जुटा पाता है। अर्थ कहीं मनुष्य को जीवनदान देता है तो अर्थ के कारण कहीं मनुष्य के प्राण भी हर लिये जाते हैं। अर्थ कहीं व्यक्ति को समाज में आदर दिलवाता है तो कहीं भ्रष्टाचार में लिप्त व्यक्ति को अर्थ के कारण अपमान भी सहना पड़ता है। अर्थ कहीं व्यक्ति के विकास में सहायक होता है तो कहीं उसके पतन का कारण भी बनता है तथा कभी–कभी उसकी मौत का कारण भी बन जाता है। सत्य तो यह है कि अर्थ भगवान तो नहीं परन्तु भगवान से कम भी नहीं है।

---

[5] डॉ॰ यशपाल, धर्मयुद्ध (भूमिका) पृ॰.5
[6] डॉ॰ नगेन्द्र, साहित्य का समाज शास्त्र, पृ॰.65

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि मनुष्य के जीवन में एवं समाज में अर्थ विविध भूमिकाएँ निभाता है। अर्थ के अभाव में जीवन की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती। धन से समृद्ध मनुष्य ही राष्ट्रीय विकास में अपना सक्रिया योगदान दे सकता हूँ। किसी भी राष्ट्र की अर्थ व्यवस्था उसके विकास में 'रीढ़ की हड्डी' साबित होती है।

6.3 देश की अर्थ व्यवस्था की व्यंजना :

एक सामाजिक प्राणी होने के नाते मनुष्य की विभिन्न प्रकार की आवश्यकताएँ होती हैं, जिन्हें पूरा करने के लिए उसे धुन की आवश्यकता पड़ती हैं अर्थ के अभाव में मनुष्य अपने जीवन को सुचारू रूप से नहीं चला पाता। इस कारण धन के बिना मनुष्य जीवन की सम्पन्नता एवं विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती। अर्थ मानव का सामाजिक विकास करने का महत्वपूर्ण घटक है। व्यक्ति की गुणवता की परख तभी होती है जब उसकी मूलभूत आवश्यकता रोटी, कपड़ा और मकान की पूर्ति हो पाती है। अर्थ सुखी जीवन के लिए मेरूदंड के समान अतिआवश्यक है। सामाजिक निर्माण में अर्थ की विशेष महत्ता है। हमारी प्रगति भी अर्थ पर निर्भर करती है। समाज में व्यक्ति और विश्व में राष्ट्र का स्थान निर्धारण भी उसकी आर्थिक स्थिति पर आधारित होता है। अतः किसी देश की विश्व में स्थिति उसके आर्थिक स्तर पर ही निर्भर करती है। देश के विकास के लिए योजनाबद्ध आर्थिक व्यवस्था सुदृढ़ होना अत्यन्त आवश्यक है। अर्थ की महत्ता बोध को भी प्रभावित करती हैं समुचित आर्थिक व्यवस्था द्वारा बोध भी प्रभावित होता है। साहित्यकार समाज की परिस्थितियों के अनुसार साहित्य सृजन करता है क्योंकि वह समाज में रहने वाला प्राणी है। समाज की आर्थिक सचेतना के प्रभाव को भी वह अपने साहित्य में उतारता है। इस प्रकार अर्थ समाज तथा समयबोध दोनों को प्रभावित करता है। समाज एवं राष्ट्र की आर्थिक व्यवस्था के प्रति व्यक्ति का बोध भी उसके आर्थिक पक्ष को प्रभावित करता हैं किसी भी राष्ट्र के अर्थ संबधित फैसलों का प्रभाव समाज पर पड़ता है। उदाहरण स्वरूप हाल ही में हजार एवं पांच सौ की मुद्रा के बंद होने तथा नई मुद्रा के चलन का समाज पर प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित हुआ है। इस कारण दैनिक जीवन अस्त–व्यस्त हुआ परन्तु राष्ट्र की आर्थिक स्थिति मजबूत करने एवं भ्रष्टाचार को समाप्त करने की दशा में एक महत्वपूर्ण फैसला होगा। जिससे देश की आर्थिक स्थिति भी मजबूत बनेगी।

प्राचीन समय में भक्ति एवं धर्म समय बोध के नियामक तत्व थे। परन्तु आज के भौतिकवादी समय में अर्थ केन्द्र में समा गया हैं आज प्रत्येक कार्य व्यापार के पीछे अर्थ शक्ति कार्य कर रही है। आज कोई भी समस्या पैसे के बल पर हल की जा सकती है। क्योंकि वर्तमान समय में हमनें पूर्ण रूप से पूंजीवादी तंत्र को अपना लिया है। इस स्थिति में हमारे अर्थ विषपक बोध का प्रभावित होना भी अनिवार्य है। वर्तमान दौर में अर्थ तंत्र की महत्ता जितने महत्वपूर्ण रूप में जीवन लक्ष्य की प्राप्ति में उभर कर सामने आई है। उतनी पहले कभी नहीं

हुई। स्पष्टतः आर्थिक समय बोध समाज के आर्थिक क्रियाकलापों द्वारा प्रभावित होता है। इस स्तर पर आर्थिक समय बोध जीवन को दिशा प्रदान करने वाला महत्वपूर्ण कारक भी है। प्राचीन समय में धन की प्रधानता के कारण ही भारत को 'सोने की चिड़िया' कहा जाता था। इसी कारण विदेशी सता भारत की तरफ आकर्षित हुई तथा भारत को व्यवसाय के नाम पर लूटकर आर्थिक रूप से जर्जर बना दिया। विदेशी सत्ता तो भारतीयों के संघर्ष के फलस्वरूप समाप्त हो गई। परन्तु इससे हमारा समाज पूँजीपति एवं मजदूर, शोषक एवं शोषित वर्गो में विभक्त हो गया है।

आर्थिक विषमता के कारण आज समाज की स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गई है। अमीर और अमीर तथा गरीब और गरीब होता जा रहा है। समाज में पूँजीपतियों द्वारा गरीबों का शोषण होता जा रहा है। किसानों एवं साधारण जनता की स्थिति आज सोचनीय हो गई है। किसान अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी नहीं कर पाता जिस कारण अर्थाभाव में आज स्थान–स्थान पर किसान आत्मदाह कर रहे हैं। पूँजीपतियों द्वारा भूमि अधिग्रहण कर किसानों को पंगु बना दिया है। आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न व्यक्ति गरीबों का शोषण करता है। आर्थिक असमानता के कारण बेकारी, गरीबी, भूखमरी, वैषम्य इत्यादि समस्याएँ हमारे सामने अजगर के समान मुँह फैलाए खड़ी हैं। समय–समय पर होने वाले युद्धों का भी हमारे देश की अर्थ व्यंजना पर गहरा प्रभाव पड़ता है। युद्ध हमारी अर्थ व्यवस्था को कमजोर बनाते हैं। युद्धों के कारण हुआ आर्थिक नुकसान भी आम जनता को ही भुगतना पड़ता है। जिसके फलस्वरूप मँहगाई, भ्रष्टाचार जैसी समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। मँहगाई हमारी समझ को भी प्रभावित करती है स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य–काव्यों में हमारी आर्थिक स्थिति को पूर्ण रूप से परिलक्षित किया गया है। जब युद्ध के दुष्परिणाम सामने आते हैं तो सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों के साथ–साथ आर्थिक स्थिति पर उसका कुप्रभाव पड़ता है। 'एक कंठ विषपायी' में शंकर के गुणों द्वारा मचाये गए उत्पात के विषय में सर्वहत कहता है कि सम्पूर्ण नगर क्षत–विक्षत दशा में है। सभी लोगों की निर्मम हत्या कर दी गई है। युद्ध के उपरांत हुए आर्थिक नुकसान का चित्रण सर्वहत के शब्दों के माध्यम से इस प्रकार किया गया है।

''सारे नगर में ताजा / जमा हुआ रक्त है।
और सड़ी हुई लाशें है / मुड़ी हुई हड्डियाँ हैं।
क्षत विक्षत तन हैं/ और उन पर भिनभिनाते हुए
चीलों और गिद्धों के झुण्ड / और मक्ख्याँ है।[7]

नगर की ऐसी क्षत विक्षत एवं दयनीय स्थिति के माध्यम से कविवर दुष्यन्त कुमार ने अपने राष्ट्र की आर्थिक दशा को संकेतित किया है कि किस प्रकार किसी भी परिस्थिति का

[7] डॉ॰ दुष्यन्तकुमार, एक कंठ विषपायी, पृ॰.45

प्रभाव राष्ट्र की आर्थिक स्थिति पर सीधा पड़ता है। इसी आर्थिक विकलांगता को 'एक कंठ विषपायी' में सर्वहत के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। भंयकर नरसंहार एवं रक्तपात के बाद राष्ट्र निर्जन एवं शमशान के समान नजर आता है। दक्ष द्वारा भव्य यज्ञ का आयोजन जहाँ देश की आर्थिक सम्पन्नता की ओर इशारा करता है वहीं खण्डित हुए यज्ञ का दृश्य देश की आर्थिक यंत्रणा का चित्र प्रस्तुत करता है। प्रजापति दक्ष का भव्य महल जो सुसज्जित किया गया है। वह किसी स्वर्ग से कम नहीं लग रहा है। परन्तु कुछ समय पश्चात् दक्ष का वही महल अस्त–व्यस्त है और सारी वस्तुएँ टूटी पड़ी है। उसे देखकर ऐसा आभास होता है मानों वहाँ युद्ध हुआ हो यह दृश्य युद्धोपरान्त देश की अर्थ व्यवस्था को अभिव्यंजित करता है –

''जन–हीन नगर
चिड़ियों के नोचे हुए पंखों से
सारा क्रम छिन्न भिन्न
पूरा परिवेश भग्न और ध्वस्ता।''[8]

जीवन का प्रत्येक पक्ष अर्थ से संबधित होता है अर्थ के बिना मनुष्य का जीवन नरक बन जाता है। आर्थिक दृष्टि से कमजोर मनुष्य रोटी की तलाश में पूरा जीवन निकाल देता है दो वक्त की रोटी के लिए मनुष्य को जीवन भर संघर्ष करना पड़ता है। गरीबी वर्तमान समय में अभिशाप बन चुकी है क्योंकि गरीब व्यक्ति का शोषण होता है। सर्वहत की दयनीय दशा देश की दयनीय आर्थिक स्थिति को प्रकट करती है। विष्णु के सर्वहत को कहने पर कि तुम थके हुए प्रतीत होते हो सर्वहत व्यंग्यपूर्ण शब्दों में कहता है –

''थका हुआ नहीं हूँ
बुभुक्षित हूँ
सुनों।
क्या तुम्हारे पास
एक रोटी होगी।''[9]

सर्वहत के इन शब्दों से अनुमान लगाया जा सकता है कि गरीब व्यक्ति की स्थिति क्या होगी। दक्ष यज्ञ के विध्वसं के माध्यम से कविवर दुष्यंत कुमार ने युद्ध से उत्पन्न गरीबी, भूख, महामारी, जैसी समस्याओं को उल्लेखित किया है। यज्ञ विध्वंस के बाद सर्वहत क्षत–विक्षत दशा में रोटी की तलाश में देवलोक पहुंच कर अचेत हो जाता तथा चेतना आने पर वह कहता है –

''किन्तु मैं बुभुक्षित था
इसीलिए आँख जब खुली तो मैं
दो रोटी पाने की आशा में

---

[8] वही, पृ॰.41
[9] वही, पृ॰.49

इतना सब रक्त स्त्राव सहकर भी
यहाँ तक चला आया
बोलों .....
तुम मुझको रोटी दे सकते हो।''[10]

यहाँ सर्वहत की जीर्ण–शीर्ण अवस्था को देखकर समझा जा सकता है कि वह आर्थिक रूप से रोटी जुटाने में असमर्थ है। तथा भूख शांत करने के लिए वह ऐसी दयनीय दशा में बह्मा के दरबार में पहुँच जाता है। भूख वर्तमान समय की सबसे भंयकर समस्या है। आज गरीबी के लिए रोटी कमाना सबसे दुष्कर कार्य हो गया है। अमीर शासकों द्वारा गरीबों का इतना शोषण होता है कि वे पेट भर रोटी भी नहीं खा पाते। वरूण और इन्द्र सर्वहत की बातों पर क्रोधित होते हैं। भूख के कारण सर्वहत की स्थिति ऐसी हो गई कि उसे सभी भूखे नजर आते है। वह वरूण और इन्द्र की ओर इशारा करते हुए कहता है –

''तुम भी बुभुक्षित हो
मैं भी बुभुक्षित हूँ
हम सब बुभुक्षित है
ये सारी दुनिया बुभुक्षित है..... ।''[11]

अपने ही शब्दों पर विक्षिप्त हँसी हँसते हुए सर्वहत कहता है कि हम सभी भूखें है परन्तु हम खायेंगे क्या, यज्ञ विध्वंस में सभी कुछ नष्ट हो गया है अब हम आर्थिक रूप से इतने कमजोर हो गए है कि हमारे पास खाने के लिए अन्न भी नहीं है। अब केवल राजभवन, अतिथि कक्ष, राजमार्ग, कलश कंगूरे ही शेष बचे हैं। क्या इन्हें खाकर अपनी भूख शांत की जा सकती है। सर्वहत शंकर की हिंसा का जीवित प्रतिरूप है।

निष्कर्षतः युद्धों एवं किसी भी प्रक्रिया का सीधा असर देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। युद्धों के कारण होने वाले जान–माल का नुकसान बाद में राष्ट्र को पंगु बना देता है। अर्थव्यवस्था हमारे राष्ट्र की 'रीढ़ की हड्डी' है। किसी भी राष्ट्र को मजबूत एवं सुदृढ़ बनाने के लिए मजबूत एवं समृद्ध अर्थ व्यवस्था का होना अनिवार्य माना जाता है।

6.4 आर्थिक विषमता :

आज के समय में व्यक्ति की इच्छाएँ पहले की अपेक्षा अधिक बढ़ गई है जिससे वह भौतिक सुखों के पीछे भाग रहा है। इस भौतिकता के कारण व्यक्ति की संवेदना समाप्त होती जा रही है। आधुनिक मनुष्य के जीवन में घुटन, संत्रास, पीड़ा, अजनबीपन, अकेलापन एवं

---

[10] डॉ॰ दुष्यन्तकुमार, एक कंठ विषपायी, पृ॰.50

[11] वही, पृ॰.52

आक्रोश की छटपटाहट दिखाई दे रही है जो मनुष्य की भौतिकवादी मानसिकता का परिणाम है। आज प्रत्येक व्यक्ति आर्थिक रूप से सम्पन्न होने की होड़ में लगा हुआ है। जिसके कारण भ्रष्टाचार, चोरबाजारी, रिश्वतखोरी जैसी अपराधिक समस्याएँ बढ़ रही हैं आज सभी भौतिक सुविधाओं को जुटाने की होड़ में लगे हुए हैं। भ्रष्टाचार एवं बेरोजगारी की समस्या के कारण अपराधों में निरन्तर बढ़ोतरी हो रही है। भ्रष्टाचार के कारण अमीर आदमी और भी अमीर होता जा रहा है। तथा गरीब आदमी और भी गरीब हो गया है। जिस कारण आर्थिक विषमता आ गई है। इसी आर्थिक विषमता का हमारे राष्ट्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। स्वातन्त्र्योतर साहित्यकारों ने आर्थिक विषमता के कारण फैली समस्याओं को अपने नाट्य काव्यों में चित्रित किया है। 'जगदीश गुप्त' कृत नाट्य–काव्य 'शम्बूक' में एक तरफ राम राज्य की सम्पन्नता को दर्शाया गया है वहीं एक तरफ शूद्र वर्ग की विपन्नता के माध्यम से आर्थिक भेदभाव को दर्शाया गया है। राम की नगरी हीरे, मोतियों से सुशोभित हैं जिसका चित्र प्रस्तुत कर राम राज्य की सम्पन्नता को दर्शाया गया है। :–

''मुद्रिका के स्वर्ण–तल सा
दीप्त सरयू–नीर
नगीने सी अवध नगरी
जड़ी मरकत हीर.....''[12]

राम की नगरी चमचमाती झालरों से युक्त है उसके द्वार पर मणि निगलते मोरों के चित्र सुशोभित हो रहे हैं। दूर–दूर चोकोर वस्त्रों से बिछे वन खेत है। राम को पुष्पक विमान में जाते हुए अयोध्यया नगरी और भी अधिक मोहक एवं सुन्दर प्रतीत होती है। जलाश्य में मंदिरों की चोटियाँ ऐसे कांप रही है जैसे चन्द्रमा जमीन पर पर उतर आया है। मोतियों से बने गोल गुम्बद सीपियों के घाट सरयू नदी की सुन्दरता का चित्र प्रस्तुत करते हैं।

जहाँ कवि ने एक तरफ राम राज्य की सम्पन्ना का चित्रण किया है वहीं वन में रहने वाली जन जातियों के दयनीय पूर्ण, विपन्न एवं करूणापूर्ण जीवन को दर्शाया है जब राम वन में पहुँचते हैं तो उन्हें चारों तरफ उन्हें आग ही आग प्रदर्शित होती है। वे वहाँ जाकर आदिवासियों की जीवन दशा को देखते हैं वन देवता के माध्यम से कवि आदिवासियों के नरकीय जीवन की स्थिति राम के समक्ष प्रकट करते हुए कहता है कि किस प्रकार वे अपने पेट की भूख शांत करने के लिए दिन भर भटकते रहते है –

''अग्नि से ही प्राप्त सारी सिद्धि हैं
अग्नि में ही व्याप्त इनकी ऋद्वि है
यह जलाति हैं इन्हें दावाग्नि

[12] डॉ॰ जगदीशगुप्त, सम्बूक, पृ॰.45

या जलाति है इन्हें जठराग्नि।''[13]

वन देवता राम को कहता है कि अग्नि से भले ही सारी सिद्धियाँ प्राप्त होती है परन्तु ये लोग जंगल की आग से नहीं पेट की आग से जल रहे हैं उनकी भूख, गरीबी, लाचारी उन्हें तिल–तिल कर मरने पर मजबूर कर रही है। ये आदिवासी वन्य प्राणी इतने निर्धन, भूखे, मासूम तथा विवश होते हैं कि ये मुठ्ठीभर चने चबाने के बाद भूख शांत न होने पर उँगलियाँ चाटते रहते हैं अथवा खामोश रहकर अपना पेट काटते हुए भुक्खड़ों की तरह रात–दिन मरते–खपते रहते हैं। फिर भी बेचारों को भरपेट रोटी नसीब नहीं होती। क्या नंग धड़ंग अथवा आधा तन ढ़के इन गरीब वनवासियों की वेशभूषा उन्हें सुहाती नहीं है इसमें कवि का जनवादी दृष्टिकोण प्रदर्शित होता है। वह आधुनिक अन्तयोदय की विचारधारा से मेल खाता है। जगदीश गुप्त की भांति कविवर दुष्यन्त कुमार ने भी 'एक कंठ विषपायी' नाट्य–काव्य में भूख की समस्या को चित्रित किया है। जो आधुनिक समय की महत्वपूर्ण समस्या बन चुकी है। आर्थिक विषमता के कारण यह समस्या और भी अधिक भयावह रूप धारण कर रही है। भूख की इसी भयावहता को कवि ने इन शब्दों में चित्रित किया है।

''दुनिया में सब भूखे होते हैं :–
– कोई अधिकार और लिप्सा का
– कोई प्रतिष्ठा का,
– कोई आदर्शो का,
और कोई धन का भूखा होता है।
ऐसे लोग अहिंसक कहलाते हैं
माँस नहीं खाते...
मुद्रा खाते हैं।.....''[14]

उपर्युक्त विवरण के माध्यम से कवि ने अमीर एवं गरीब की भूख की असमानता को दर्शाया है। अमीर के पास धन होते हुए भी और पैसा कमाने के लिए भ्रष्टाचार फैलाता है वहीं गरीब को एक समय की रोटी कमाने के लिए दिन–रात कड़ी मेहनत करनी पड़ती है। अमीर रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार जैसे कर्मकाण्डों के माध्यम से ओर अमीर होता जा रहा है। वहीं गरीब की स्थिति भरपूर मेहनत के बाद भी दयनीय ही बनी रहती है। यही आर्थिक विषमता देश के विकास में बाधक होती है। आर्थिक विषमता के कारण ही समाज मध्यम, उच्च एवं निम्न वर्गो में बंटा हुआ है। उच्च वर्ग का समाज सदैव निम्न वर्ग का शोषण करता रहता है जिस प्रकार बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है उसी प्रकार उच्च वर्ग निम्न वर्ग का शोषण करता रहता

[13] डॉ॰ जगदीशगुप्त, शम्बूक, पृ॰.31
[14] डॉ॰ दुष्यन्तकुमार, एक कंठ विषपायी, पृ॰.66

है और शोषण का शिकार निम्न वर्ग शोषित बना रहता है। 'एक कंठ विषपायी' में शोषित वर्ग की इसी कुंठा को कवि दुष्यन्त कुमार ने इस प्रकार व्यंजित किया है –

''हम सब मर जायेंगे एक रोज
पेट को बजाते
और भूख–भूख चिल्लाते
हम सब मर जायेंगे एक रोज
....ठूँठे रह जायेगी
सांसों के पत्ते झर जायेंगे एक रोज.....''[15]

सर्वहारा वर्ग की इस दयनीय दशा के माध्यम से कवि ने आर्थिक विषमता का पृष्ठपोषण किया है। आर्थिक विषमता आज के समय में हमारे राष्ट्र के लिए अभिशाप बनी हुई है। क्योंकि कोई भी राष्ट्र तब तक समृद्ध नहीं हो सकता जब तक आर्थिक रूप से समृद्ध एवं सम्पन्न न हो तथा उसके सभी वर्गो का विकास समान रूप से न हो रहा हो।

सुभाष पंत ने भी अपने नाट्य काव्य 'चिड़िया की आंख' में आर्थिक विषमता को प्रकट किया है। गरीब जनता की आर्थिक यंत्रणा को कवि ने धनिक के शब्दों के माध्यम से जीवंत रूप प्रदान किया है :–

''आपके घावों के लिए औषधि नहीं है।
असमर्थ हैं
हम निर्धन अछूत
हमारे घाव तो ऐसे ही भर जाते है।''[16]

राजा का अश्वपाल शोणभद्र जब घायल अवस्था में ग्रामीणों के पास आता है। उसकी असमर्थता प्रकट करते हुए कवि ने ग्रामीण जीवन की दयनीय दशा को चित्रित किया है कि गरीब जनता के जीवन का कोई मोल नहीं होता। उनके जख्म बिना किसी दवाई के ही भर जाते हैं। औषधि पर खर्च करने के लिए उनके पास धन का अभाव होता है। वे ऐसा कारूणिक जीवन जीने के लिए विवश है। प्रजा के परिश्रम के कारण ही राष्ट्र सम्पन्न बनता है। परन्तु गरीब फिर भी विपन्नता के चक्रव्यूह में फंसे रहते है। ग्रामीणों के शोषण एवं विपन्नता के माध्यम से कवि ने वर्तमान समाज की वास्तविक स्थिति को प्रस्तुत किया है।

''हमारा श्रम
देता है हमें भूख, अपमान, शोषण, अत्याचार
और खड़ी करता है उनके अन्तःपुर में
सोने की दीवार।''[17]

---

[15] वही, पृ॰.65.66
[16] डॉ॰ सुभाष, चिडिया की आँख, पृ॰.20

वृद्ध ग्रामीण के यह वचन हमें अंदर तक झंझोर देते हैं। हमारा परिश्रम हमें अपमान, भूख, शोषण और अत्याचार देता है। और नेताओं को समृद्धि प्रदान करता है। हमारे श्रम के कारण ही राष्ट्र अन्न से सम्पन्न होता है। हम भूख से व्याकुल रहते है। कवि का ये कथन विचारणीय है कि जिसके पास सत्ता है शक्ति भी उसी के पास है जब तक हम यह अत्याचार सहते रहेंगे तब तक हम पर अत्याचार का शिंकजा कसता ही रहेगा। हमें स्वयं परिस्थितियों से लड़ना होगा। अकेला चना भाड़ नहीं झोंक सकता इसलिए हम सबको मिलकर प्रयास करने होगें। गरीब एवं अमीर के बीच की गहरी खाई को पाटना होगा और अपने सोए हुए आत्मविश्वास को जगाना होगा। राजभवन में निम्न वर्ग के लोगों के प्रवेश पर पाबंदी होती है। जिस कारण राजा तक गरीबों की फरियाद नहीं पहुंच पाती। इसलिए वे कहते है कि राजनेता कोई भी हो हमारे लिए राज्य के द्वार बंद ही रहेंगे। हमारा शोषण होता रहेगा। वर्तमान राजतंत्र में भी नेताओं के चाटुकार उनके इर्द गिर्द घुमते रहते हैं। आम जन की सुनवाई कहीं नहीं होती। शोणभद्र द्वारा घाटी के लोगों द्वारा आश्रय देने पर शोणभ्रद स्वयं को उन्हीं के समान बताता है। परन्तु धनिक उसके प्रत्युत्तर में कहता है कि तुम तो राजा के अश्वपाल हो और हमारा राज दरबार में प्रवेश करना भी निषेध है। कवि ने धनिक के माध्यम से शासक द्वारा शोषित गरीब की व्यथा को चित्रित किया है।

आर्थिक सम्पन्नता गरीब एवं अमीर के बीच की खाई है। सम्पन्न व्यक्ति को समाज में उच्च दर्जा दिया जाता है जबकि निम्न वर्ग को संविधान द्वारा अधिकार दिये जाने पर भी उसे समाज में हेय दृष्टि से देखा जाता है। 'चिड़िया की आँख' में जब राजदरबार में शास्त्रार्थ होता है तो एकलव्य भी उसमें भाग लेने के लिए जाता है। परन्तु द्वार से ही उसे यह कहकर वापिस लौटा दिया जाता है कि अछूतों को शास्त्रार्थ में भाग नहीं लेने दिया जा सकता तथा एकलव्य का भरपूर अपमान भी किया जाता है। संविधान में दिये समानता के अधिकार को झुठला दिया जाता है। उसके विरूद्ध उठने वाली आवाज को वही दबा दिया जाता है। राजदरबार में प्रवेश न कर सकने के कारण एकलव्य में शोषण के प्रति विद्रोह का स्वर प्रस्फुटित होता है। हमें राजतन्त्र ने कायर और पंगु बना दिया है। परन्तु इसे अपना भाग्य समझकर सहना भी हमारी मुर्खता है। इसके विरूद्ध आवाज उठाना हमारा कर्तव्य है बिना तर्क और विरोध के शोषण के दुर्ग को नहीं तोड़ा जा सकता। कवि के स्वर में शोषण के विरूद्व विद्रोह का आह्वान स्पष्ट दिखलाई पड़ता है।

''शब्द अंतिम सत्य नहीं है
और न तर्को से
तोड़े जा सकते हैं शोषण के दुर्ग

---

[17] वही, पृ॰.20

फिर हमें तो

बोलने तक का अधिकार नहीं है।''[18]

कवि ने उपर्युक्त पंक्तियों के माध्यम से गरीब एवं अमीर के भेद को परिलक्षित किया है किस प्रकार गरीब व्यक्ति अपने सभी अधिकार खोकर अमीर के हाथों की कठपुतली मात्र बनकर रह जाता है। घाटी के लोगों पर हो रहे शोषण को कवि ने चित्रित किया है।

सुभाष पंत ने जहाँ घाटी में रह रही गरीब जनता के स्वर को मुखर किया है वहीं 'जगदीश गुप्त' ने 'शम्बूक' नाट्य–काव्य में आदिवासी जन जीवन के भोलेपन को प्रकट किया है। वे नगर जनों की भांति छलपट नहीं जानते इसका एक मुख्य कारण उनमें शिक्षा का अभाव है। इसी कारण वे अपने अधिकारों को नहीं समझ पाते और उनके लाभों से वंचित रह जाते हैं। शिक्षा अभाव के कारण उनमें अंधविश्वास की प्रखरता पाई जाती है। इसी कारण जब ब्राह्मण के बच्चे को साँप डस लेता है तो अंधविश्वास के परिणाम स्वरूप यह अफवाह फैल जाती है कि कोई शूद्र वन में तप कर रहा है इसी कारण ब्राह्मण के पुत्र की मृत्यु हो जाती है। शिक्षा के अभाव में ही वे सरकार द्वारा प्राप्त योजनाओं द्वारा दिये गए लाभों का 10 प्रतिशत भी उन तक नहीं पहुँचने देते। जिससे गरीब एवं अमीर के बीच की खाई और भी अधिक गहरी होती जाती है। वर्तमान समय में भी सरकार द्वारा दी गई अधिकतर परियोजनाओं का लाभ भ्रष्ट अधिकारियों के कारण गरीब जनता तक नहीं पहुँचा पाता। इसलिए कवि राम को संबोधित करते हुए कहता है। सैकड़ों मीलों तक तुम्हारी कल्याणकारी योजनाओं का प्रसार–प्रचार हो रहा है। लेकिन अगर तुम्हारी ये समस्त योजनाएँ मात्र उद्घाटन आदि तक ही सीमित होकर रह जाए। इनका प्रतिफल एवं इनके गुणंक परिणाम भूखे, नंगे, निर्धन, असहाय, अरक्षित तथा शोषित वर्ग तक नहीं पहुँच पाते। इसलिए तुम्हारा श्रम व्यर्थ है। कवि ने भ्रष्टाचार से त्रस्त एवं पीड़ित लोक समुदाय की शोषित अवस्था का निर्भीक उद्घाटन करते हुए अपने भावों का उद्गार किया है –

''सुना है फैली है तुम्हारी
आयोजनों तक योजनाएँ
यदि पहुँच पायी नहीं
भूखे, जनों तक योजनाएँ
ये निरक्षर वन्य पिछड़े लोग
सहते रहें कब तक यातनाएँ।''[19]

अधिकांश योजनाएँ देश के अन्त्यवर्ग तक नहीं पहुँच पाती। अत्यन्त निर्धन एवं बलहीन समुदाय पहले की भांति शासक द्वारा संस्थापित एवं संचालित जन कल्याणकारी योजनाओं की

[18] डॉ॰ सुभाष, चिडिया की आँख, पृ॰.33
[19] डॉ॰ जगदीश गुप्त, शम्बूक, पृ॰.29

उपलब्धियों का अधिभाग प्राप्त नहीं कर पाता। गरीब व्यक्ति भूख एवं गरीबी की मार झेलते हुए अधमरा हो गया। भ्रष्ट अधिकारियों द्वारा निर्धन जनता के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है। वर्तमान कर्मचारी निर्धन को सताने, लूटने–खसोटने के लिए नितियाँ गठता रहता है। यह सब दुर्व्यवहार शासक की मिली भगत के कारण ही होता है। इसी कारण भ्रष्ट अधिकारियों का इतना साहस बढ़ जाता है कि वे आम जनता पर अत्याचार करते हैं। कवि ने वन्य प्राणियों के माध्यम से वर्तमान निर्धन जनता के शोषण, व्यथा, अभाव एवं असुरक्षा आदि का शिकायत भरा विवेचन किया है। जो व्यवस्था वर्ग सीमित स्वार्थो से लिप्त हो वह सदैव प्रजाजनों के लिए घातक सिद्ध होती है। भ्रष्टाचार के कारण गरीबों को उन्नति के अवसर भी नहीं मिल पाते।

'सुमित्रानन्दन पंत' के नाट्य काव्य 'सौवर्ण' में अमीर एवं गरीब के मध्यम की खाई को पाटकर समानता लाने का संदेश दिया गया हैं। क्योंकि जब तक गरीब एवं अमीर का भेद समाज से समाप्त नहीं हो जाता तब तक राष्ट्र विकास सम्भव नहीं है। कवि अपनी कल्पना के माध्यम से यह भेद समाप्त कर एक सुनहरे राष्ट्र की कामना करता है जिसमें सभी समान हों –

''दैन्य दुख मिट गये, छँट गये धूमिल पर्वत
घृणा द्वेष स्पर्धा के भय संशय उत्पीड़न के
जन शोषण, अन्याय, अनय से मुक्त धरा पर
एक छत्र अब शान्ति, साम्य स्वातन्त्र्य प्रतिष्ठित।''[20]

'सुमित्रानन्दन' की भांति 'धर्मवीर भारती' जी अंधा युग में अमीर एवं गरीब की इस विषमता को मिटाकर सभी जीवों को समान अधिकार दिलाना चाहता है। कृष्ण के माध्यम से कवि नव–निर्माण एवं समानता का संदेश देता है। समाज में फैली असमानता एवं विषमता को समाप्त कर कवि सभी को समान दर्जा देना चाहता है जब प्रहरी स्वयं को समाज में निम्न वर्ग का होने के कारण निरर्थक समझते है। वे कहते है कि अमीर समाज में हमारा कोई अस्तित्व नहीं है। हमारी मेहनत, साहस, श्रम, उच्च वर्ग के लिए कोई अर्थ नहीं रखती। प्रहरी की पीड़ा को अनुभव करते हुए कवि समाज में वर्ग भेद को समाप्त कर हर छोटे से छोटे व्यक्ति के जीवन की सार्थकता की कामना करता है। वह अपने विकृत जीवन के नये अर्थ से सार्थक करने के लिए उद्यत दिखायी पड़ता है। वह प्रश्नाकुल होकर कहता है –

''उसके इस नये अर्थ में
क्या हर छोटे से छोटा व्यक्ति
विकृत, अर्द्ध बर्बर, आत्मघाती, अनास्थामय
अपने जीवन की सार्थकता पा जायेगा।''[21]

---

[20] डॉ॰ सुमित्रानन्दन पंत, सौवर्ण पृ॰.8

उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि अंधा युग में कवि आर्थिक आधार पर होने वाली विषमता को मिटाकर कर्म–सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है। कर्मो के कारण मनुष्य महान बनता है न कि अर्थ भेद के कारण परन्तु वर्तमान समय में परिस्थितियाँ इसके विपरीत दिखलाई पड़ती है। आज समाज में आर्थिक स्तर पर असमानता बढ़ गई है। उच्च वर्ग और भी ऊँच होता जा रहा है और निम्न वर्ग और भी निम्न धन अभाव में जहाँ गरीब व्यक्ति को दो वक्त की रोटी नसीब नहीं होती वहीं अमीर समाज अपने भौतिक सुखों के लिए अरबों पैसे लुटा देता है। इसी असमानता के कारण समाज में भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, चोरी एवं अपराधिक समस्याओं का जन्म हो रहा है।

निष्कर्षतः वर्तमान समय में आर्थिक विषमता एक गहन समस्या बन चुकी है। इसने समाज को खण्डों में विभक्त कर दिया है जो हमारे राष्ट्र की अवनति का कारण बन रही है। इसी समस्या को स्वातन्त्र्योत्तर कवियों ने अपने नाट्य–काव्यों में सम्पन्न एवं विपन्न वर्ग के माध्यम से अभिव्यंजित किया है। किस प्रकार आज विपन्न वर्ग कड़ी मेहनत के बाद भी भरपेट खाना नहीं खा पा रहा है। वह धनाभाव में चोरी, झूठ एवं अनेक अपराधों की ओर अग्रसर हो रहा है। अर्थ आज के समय में हमारी मूलभूत आवश्यकता बन चुकी है अर्थ के आधार पर ही व्यक्ति की समाज में स्थिति निर्धारित की जाती है तथा इसी भांति विश्व में राष्ट्र की स्थिति भी उसकी अर्थ व्यवस्था के आधार पर निर्धारित होती है। किसी भी राष्ट्र का विकास उसकी मजबूत अर्थव्यवस्था पर ही निर्भर करता है।

6.5 नई पूँजीवादी व्यवस्था का अभ्युदय :

स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ ही हमारा समाज शोषक एवं शोषित दो वर्गो में विभक्त हो गया। शोषक वर्ग समाज का पूंजीपति वर्ग कहलाया। स्वतन्त्रता के पश्चात् हमारे देश की सत्ता कुछ पूँजीपति उद्योगपतियों एवं व्यापारियों के हाथों में चली गई। जिन्होंने इसका भरपूर लाभ उठाया एवं अपने लाभों को ध्यान में रखकर राजनीति की। जिससे राष्ट्र के प्रत्येक क्षेत्र में इनका प्रभुत्व हो गया। हमारा स्वातन्त्र्योत्तर साहित्य शोषक वर्ग एवं पूँजीवादी व्यवस्था पर प्रहारों से भरा हुआ है। स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य काव्यों में भी पूँजीवादी व्यवस्था के घातक परिणाम का चित्रण है। पूँजीपति सत्ताधारी नेता मिलकर केवल अपने ही स्वार्थो के विषय में सोचते हैं वे अपने को शक्तिशाली दर्शाने के लिए सदैव स्वयं को संरक्षक बता कर अपनी प्रजा को अपने, अनुसार चलाते हैं इसी भाव को प्रकट करते हुए दुष्यंत कुमार के 'एक कंठ विषपायी' नाट्य–काव्य में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये हैं –

---

[21] डॉ॰ धर्मबीर भारती, अंधा युग पृ॰.130

''मेरे पास शस्त्र की कोई कमी नहीं हैं,
मेरे पास अन्न की कोई कमी नहीं है,
मेरे पास वस्त्र की कोई कमी नहीं है,
और न मेरे योद्धाओं का क्षीण मनोबल है
और न मैं अक्रामक /मैं तो संरक्षक हूँ।''[22]

उपर्युक्त पंक्तियों में इन्द्र जैसे राजा नए पूँजीवादी वर्ग के प्रतीक है, जो अपनी सत्ता बनाए रखने के लिए प्रजा को बहलाकर स्वयं को उनके पालनहार बताकर उनका शोषण करते हैं। युद्ध जैसे भयंकर परिणाम उन्ही के गलत फैसलों के कारण पनपते हैं।

धर्मवीर भारती कृत 'अंधा युग' भी उसी समय की रचना है जब भारत स्वतन्त्र हुआ था तथा चारों तरफ संत्रास, पीड़ा, कुंठा एवं अंधकार का भयानक उपद्रव फैला हुआ था। अंग्रेजों के हाथों से निकलकर शासन की बागडोर अब हमारे ही राष्ट्र के कुछ लालची एवं पूँजीपतियों के हाथों में सौंप दी गई थी। साधारण प्रजा जो अपनी आंखों में आजादी के बाद सुनहरे भारत के स्वप्न पाले हुए थी नई पूँजीवादी व्यवस्था के अभ्युदय के कारण उनका भ्रम टूट गया। कौरव–पक्ष की हार और पाण्डव पक्ष की विजय के पश्चात् हस्तिनापुर के शासन की बागडोर धर्मराज युधिष्ठिर के हाथों में आ जाने पर भी दोनों प्रहरियों जो साधारण जनता के प्रतीक है को शासन–व्यवस्था में कोई परिवर्तन नजर नहीं आता है इस तथ्य पर प्रकाश डालते हुए वे दोनों पूरक संवादों के रूप में कहते हैं :–

''हम जैसे पहले थे / वैसे ही अब है।
शासन बदले / स्थितियाँ बिल्कुल वैसी है
इससे तो पहले के ही शासक अच्छे थे/ अन्धे थे.....
... लेकिन वे शासन तो करते थे। ये तो संतज्ञानी हैं।
शासन करेगें क्या? / जानते नहीं है ये प्रकृति
राजाओं की।''[23]

स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य–काव्यों में जनता के सुनहरे सपनों के टूटने का संत्रास एवं दर्द परिलक्षित होता है तथा पूँजीवादी सत्ता के उत्थान का समय दिखलाई पड़ता है। 'लक्ष्मीनारायण लाल' कृत 'सूखा सरोवर' में भी सत्ता को पूँजीवादी हाथों में सौंपा गया है। बड़ा राजा प्रजा का हितैषी एवं निडर है। छोटे राजा के षड्यंत्रों के कारण वह महल छोड़कर सन्यासी बन जाता है। छोटा राजा अपने अस्तित्व की रक्षा करने के लिए मैनापुरी के राजा जो आर्थिक एवं सैन्यबल रूप से समृद्ध है संधि करता है जो उसकी कायरता का परिचायक है। वह मैनापुरी के राजा के वैभव के कारण ही अपनी कन्या का विवाह उससे करना चाहता है। परन्तु वह किसी

[22] डॉ॰ दुष्यन्त कुमार, एक कंठ विषपायी, पृ॰.66
[23] डॉ॰ धर्मबीर भारती, अंधायुग, पृ॰.109

और से प्रेम करती है। इसी कारण मैनापुरी के राजा का वैभव भी ठुकरा देती है। परन्तु छोटा राजा अपनी सम्पन्नता बढ़ाने के लिए उसका विवाह जबरदस्ती कराना चाहता है। वह पुरोहित से कहता है कि जब बड़े राजा का अभिषेक हो रहा था तो पूरी जनता मेरी सैन्य शक्ति को चुनौती दे रही थी। इसलिए वह मैना पुरी के राजा से संधि कर स्वयं के समृद्ध बनाना चाहता है। वह केवल अपने स्वार्थ के विषय में सोचता है –

''मैं निरंकुश सर्वोच्च सत्ताधारी
और कितनी कम सैन्य शक्ति मुझमें।''[24]

छोटा राजा और पुरोहित दोनों ही पूँजीपतियों के हाथों की कठपुतली है वे दोनों लोभी एवं लालची है जो केवल अपने स्वार्थो की चिंता करते हैं। प्रजा के विरोधी बनकर वे स्वयं को दूसरे राजाओं से संधि कर समृद्ध बनना चाहते हैं परन्तु वास्तव में वे कायर एवं पूँजीपतियों के चापलूस हैं। स्वतन्त्रता के साथ–साथ राष्ट्र में नई पूँजीवादी व्यवस्था की अभ्युदय हुआ। राष्ट्र अब अंग्रेजों के हाथों से निकलकर कुछ पूँजीपतियों के हाथों में चला गया था जिन्होंने अपने लाभ हेतु राष्ट्र को चलाने वाले नियमों को बनाया। वर्तमान समय में भी स्थिति वैसी ही बनी हुई है जो संघर्ष करता है, बलिदान देता है वह पीछे रह जाता हैं और जो सत्ता के नशे में चूर कपटपूर्ण राजनीति करता है। राष्ट्र की बागडोर उसी के हाथों में होती है। जब स्वतन्त्र भारत कुछ पूँजीपतियों के हाथों में चला गया और साधारण जन का शोषण आरम्भ हुआ तभी जनता ने मिलकर इसका विरोध करते हुए स्वयं को शक्तिशाली बनाया। आज जब 'चिड़िया की आँख' नाट्य काव्य में एकलव्य राजा के विरूद्ध आक्रोश प्रकट करते हुए कहता है कि अब हमें भी प्रतिदिन होने वाले अपमान से बचने के लिए शक्तिशाली होना होगा। क्योंकि शक्ति से ही सत्ता प्राप्त की जा सकती हैं एकलव्य के शब्दों के माध्यम से कवि 'सुभाष पंत' जी ने जनजागरण का प्रयास किया है –

''धनुष की डोर शक्ति का केन्द्र है
यह नहीं देखती जात–पात
जो कौशल से खींचता है
इसकी प्रत्यन्चा
वही इतिहास बदलता है।
हमें इतिहास बदलना है
नहीं तो कसता जाएगा
हमारे गले में
शोषण का फँदा।''[25]

---

[24] डॉ॰ लक्ष्मी नारायण लाल, सूखा सरोवर, पृ॰.74

'चिड़िया की आँख' नाट्य–काव्य के माध्यम से कवि ने शोषित वर्ग में चेतना जागृत करने का प्रयास किया है। एकलव्य के माध्यम से स्पष्ट अभिव्यक्त होता है कि जब तक हम स्वयं आगे बढ़कर विरोध नहीं करेगें तब तक शोषण का फंदा हमारे गले में कसता ही रहेगा। हमें ही परिस्थितियों को बदलने का प्रयास करना होगा। माधवी के यह कहने पर कि राजतंत्र अक्षौहिणी सेना से रक्षित है। एकलव्य स्पष्ट करता है कि शोषित वर्ग यदि शोषण के विरूद्ध एकीकार कर ले तो वह राजतंत्र की अक्षौहिणी सेना से भी जीत सकता है। इतिहास को बदलकर नव निर्माण कर सकता है। जब मनुष्य लक्ष्य पाने के लिए संघर्ष करता है तो वह एक निर्णायक शक्ति बन जाता है।

पूँजीवादी समाज द्वारा निम्न वर्ग को दबा दिया जाता है। जब शोषित समाज आगे बढ़कर शोषण के विरूद्ध लड़ता है तो सभी राजनैतिक दल एक हो जाते है। द्रोण एवं अर्जुन के मध्य वार्तालाप इसी बात की ओर संकेत करता है द्रोण अर्जुन को एकलव्य के विषय में बताता है कि वहाँ शोषित समाज में विद्रोह की ज्वाला धधक रही है। जिसे समय पर कुचलना अनिवार्य है। वर्तमान समय में इसी प्रकार निम्न वर्ग की आवाज को राजनीतिक दलों द्वारा दबा दिया जाता है। इसीलिए एकलव्य की आवाज को दबाने के लिए दुर्योधन की सैन्य शक्ति का सहारा लेने के लिए भी पाण्डव तैयार हो जाते हैं। क्योंकि यह विद्रोह दुर्योधन या युधिष्ठिर के विरोध में नहीं अपितु पूँजीवादी व्यवस्था की अवधारणा के विरोध में है। जो सिहांसन के लिए घातक है। यही वास्तव में चिंता का विषय है। अर्जुन द्वारा यह कहने पर कि क्षत्रिय शत्रुओं को अपने बल पर पराजित करते हैं। इस पर द्रोण कहता है कि राजनीति की आँख साधन पर नहीं साध्य पर होनी चाहिए। एकलव्य को बल से नहीं हराया जा सकता। इसलिए छल से उसका अगूँठाा काट लेना राजनैतिक आवश्यकता है। क्योंकि उसका अंगूठा इतिहास की दिशा है काट लिया गया तो तुम्हारा विजय मार्ग प्रशस्त हो जाएगा और नहीं काटा गया तो कल इन्द्रप्रस्थ का राज्य मिट्टी में मिलने लगेगा। अर्जुन के शब्दों से स्पष्ट झलकता है कि पूँजीवादी राजतन्त्र में जो विद्रोह करता है उसे कुचल दिया जाता है। इसीलिए अर्जुन कहता है कि जब घाटी के लोगों की ओर से विद्रोह हुआ था तब हमने सैन्य बल से इनके विद्रोह को पूरी तरह से कुचल दिया था। पूरा गाँव जला दिया गया था। विरोधी मौत के घाट उतार दिये गए थे। उनका मनोबल हमनें पूरी तरह से तोड़ दिया था। उन्हें कर न देने पर लूट लिया गया था। वे अब सिर नहीं उठा सकेंगे। यहाँ एकलव्य वर्तमान मानव की शक्ति का प्रतीक है जो आधुनिक जनता के आत्मविश्वास को जगाता रहेगा तब तक वे पूँजीवादी व्यवस्था के विरूद्व सिर उठाते रहेगें जनता जब जागती है तो राजतंत्र उसके सामने बौना और पंगु हो जाता है और वह अनन्त शक्ति समुन्द में तिनके के समान बहने लगता है। शक्ति सम्पन्न राजतंत्र उनसे

---

[25] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आंख, पृ॰.34

कर प्राप्त नहीं कर सका। – ''उनके खेत खलिहान जला डाले गये। हत्या और बलात्कार हुए। पर वे झुके नहीं। धर्मतंत्र को जाल उन्होंने काट फेंका है वे जाग गये है।''[26] स्वातन्त्र्योत्तर कवियों ने जहाँ पूँजीवादी व्यवस्था को चित्रित किया है वहीं इसके विरूद्ध उठने वाली आवाज को भी कवि अभिव्यंजित किया है कि किस प्रकार वर्तमान मनुष्य संघर्ष के माध्यम से पूँजीवादियों के अत्याचारों से मुक्ति पाना चाहता है। इसीलिए शम्बूक आज भी एकलव्य बनकर मुक्ति की कामना करता है –

''अपनी मुक्ति नहीं ढूँढता
सबकी मुक्ति के लिए
चुनता है सीधा संघर्ष।''[27]

एकलव्य के संघर्ष के माध्यम से कवि ने आधुनिक शोषित वर्ग के संघर्ष को चित्रित किया है। आधुनिक पूँजीवादी व्यवस्था के शोषण का शिकार होता मानव आज उसके विरोध में अपनी आवाज बुलंद करता है। मनुष्य अब जान गया है कि शक्ति का केन्द्र वह स्वयं है। वही अक्षर और अनन्त है वह अपनी असीम शक्ति को पहचान गया है। जान गया है कि विजय उसकी ही होती है जो अपने लक्ष्य को केन्द्र में रखकर संघर्ष करता है। स्वातन्त्र्योत्तर परिस्थितियों में मनुष्य दुविधाग्रस्त एवं द्वन्द्व की स्थिति में था उसे अपनी अंधकारमय परिस्थितियों से बाहर निकलने का कोई रास्ता नजर नहीं आ रहता था तभी स्वातन्त्र्योत्तर कवियों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से उसमें नई चेतना एवं नए बोध को विकसित किया जिसने उसे इन परिस्थितियों से निकालने में सेतु का कार्य किया।

निष्कर्षतः स्वातन्त्र्योत्तर काल कुंठा, संत्रास, द्वन्द्व, घुटन, उदासीन, निष्क्रियता का काल रहा है क्योंकि स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही देश पूँजीपतियों के हाथों में चला गया और साधारण जनता द्वारा देखे गए स्वप्न धुँधले पड़ गए। पूँजीवादियों ने अपने स्वार्थो को ध्यान में रखकर नियम बनाए। साधारण जन पिछड़ गया और पूँजीवादी वर्ग और भी समृद्ध हो गया। स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य–काव्यों में कवियों ने इसी घुटन, पीड़ा को दर्शाने के साथ–साथ मनुष्य द्वारा इस अंधकारमय जीवन से बाहर लाने के लिए संघर्ष चेतना को भी चित्रित किया।

6.6 नया अर्थ तंत्र : साहित्य सृजन :

साहित्यकार सामाजिक प्राणी होने के कारण वह समाज को प्रभावित करने वाले महत्त्वपूर्ण कारण अर्थ तंत्र से कैसे अछूता रह सकता है। अर्थ किसी भी राष्ट्र की समृद्धि की

---

[26] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आंख, पृ॰.85

[27] वही, पृ॰.85

'रीढ़ की हड्डी' मानी जाती है। इस कारण साहित्यकार भी अर्थ की महत्ता को समझता है। तथा समाज को चित्रित करते समय उसकी आर्थिक स्थिति का चित्रण स्वयं ही हो जाता है। उसे रहन–सहन, खान–पान, एवं जीवन शैली ही उसकी आर्थिक स्थिति को दर्शा देती है। 'एक कंठ विषपायी' नाट्य–काव्य में दुष्यन्त कुमार ने युद्ध से पूर्व दक्ष प्रजापति के राज्य की स्थिति एक सम्पन्न एवं समृद्ध राष्ट्र के रूप में दर्शायी है –

''यहाँ सब कुछ हैं
देखों ये महल हैं
कँगूरे हैं
कलश है
अतिथि भवन हैं
राजमार्ग है।''[28]

दक्ष के यज्ञ के माध्यम से लेखक ने दक्ष की आर्थिक समृद्धि और सम्पन्नता को प्रस्तुत किया है। वहीं यज्ञ विध्वंस होने पर राष्ट्र की क्षत–विक्षत स्थिति को प्रदर्शित किया है।

स्वातन्त्र्योत्तर कवियों ने अपने समाज के परिवेश एवं परिस्थितियों के माध्यम से उनकी आर्थिक स्थिति को भी अप्रत्यक्ष रूप से प्रदर्शित किया है। आज साधारण लोगों अथवा प्रजाजनों की समस्या भूख है। शासक चाहे जितने आश्वासन दें, उन्हें वर्तमान तो क्या भविष्य में भी अपनी भूख मिटती नहीं जान पड़ती। 'एक कंठ विषपायी' में सर्वहत ब्रह्मा के सामने अपनी समस्या रखता है –

''अब सब मर जाऐगें एक रोज
पेट को बजाते
और भूख–भूख चिल्लाते
हम सब मर जाएंगे एक रोज....
ठूँठे रह जाएगी
सांसों के पत्ते झर जाएगें एक रोज।''[29]

सर्वहत के माध्यम से कवि ने मध्यम वर्ग की दयनीय दशा का मार्मिक चित्रण किया है। जो गरीबी एवं भूख की मार झेल रहा है। आर्थिक रूप से उसकी स्थिति दयनीय है।

'सूखा सरोवर' में भी लक्ष्मी नारायण लाल ने स्वार्थो पर आधारित राजा को दर्शाया है जो आर्थिक रूप से अपने राष्ट्र को सम्पन्न बनाने के लिए राजनीतिक षड्यंत्र रचता है। वह समृद्ध राष्ट्रों से समझौता करता है। जिसके बदले वह अपनी पुत्री का विवाह उस राजा से जबरदस्ती करना चाहता है तथा अपनी शक्ति बढ़ाना चाहता है। राजा कहता है जो मुझे मथ

[28] डॉ॰ दुष्यन्त कुमार, 'एक, कंठ विषपायी' पृ॰.45
[29] वही, पृ॰.85

रहा है यही वह नग्न सत्य है इस मौलिक सत्य को मैनें पा लिया है। जिससे मैं रिद्धि और सिद्धि प्राप्त कर लूँगा और ये समृद्ध शासक मेरी रक्षा करेगें। इसी स्वार्थो से लिप्त अर्थ तंत्र को लेखक न अपने साहित्य में चित्रित किया है। राजा के शब्दों से उसे व्यंजित किया गया है –

''मैनापुरी के राजा से
मैं सैन्य संधि कर रहा हूँ
उसकी अजय सैन्य शक्ति
मेरी शक्ति होगी।''[30]

इसी प्रकार से नये अर्थ तंत्र को साहित्य में स्थान दिया जा रहा है। क्योंकि साहित्य समाज का दर्पण है समाज जैसा होगा साहित्य भी वैसा होगा इसी कारण समाज राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक आदि पहलुओं के साथ–साथ आर्थिक तंत्र का उद्‌बोधन भी साहित्य में कवियों ने किया है। सूखा सरोवर भी राजा स्वयं को समृद्ध बनाना चाहता है। वह प्रजा का हितैषी नहीं है जबकि प्रजा के ही विरूद्ध सैन्य बल तैयार कर रहा है। वह राष्ट्र की समृद्धि के विषय में न सोचकर केवल अपनी आर्थिक स्थिति के विषय में ही विचार करता है। छोटे राजा की भांति ही उसका पुरोहित भी निजी स्वार्थो के कारण राजा की चापलुसी करता रहता है। राजा कहते हैं नीति तिनका है और दर्शन अग्नि है जब हम समृद्ध हो जाएंगे तो हमारा ही दर्शन होगा और प्रजा पर हमारा शासन होगा –

''नीति के पीछे
जब ऐसी सैन्य शक्ति होगी।
तब इस संधि से वह दर्शन उगेगा।''[31]

लेखक ने इन पंक्तियों के माध्यम से स्पष्ट किया है कि जैसा सत्ताधारी राजा का दर्शन होता है वैसा ही प्रजा का भी हो जाता है। क्योंकि प्रजा राजा का ही अनुसरण करती है। आर्थिक तंत्र एक ऐसा पहलू है जो राजा की सत्ता को सबसे अधिक प्रभावित करता है और यही आर्थिक पहलू साहित्य का विषय बन जाता है।

आधुनिक समय में दलित विमर्श एवं स्त्री विमर्श को साहित्य से अधिक स्थान मिल रहा है। यह समय की माँग है। दलित समाज को आर्थिक रूप से समता प्रदान करने के लिए कवियों ने दलित एवं शोषित समाज को उभारने का प्रयत्न किया है। प्राचीन समय से ही दलित वर्ग घृणित एवं शोषित रहा है। समय परिवर्तन के साथ–साथ परिस्थितियाँ अवश्य बदली है परन्तु आज भी कहीं कहीं दलित समाज का शोषण हो रहा है। जनजातियों एवं दलितों को उनके अधिकार संविधान में दिये गए हैं परन्तु सत्ताधारी व्यक्ति उनका प्रयोग राजनैतिक षड्‌यंत्रों के लिए करता है। जिस कारण दलित समाज में आक्रोश दिखाई पड़ता है और वह आंदोलनों,

---

[30] डॉ॰ लक्ष्मीनारायण लाल, सूखा सरोवर पृ॰.83
[31] वही पृ॰.83

धरनों के माध्यम से अपना विरोध प्रकट करता है। कहीं–कहीं जहाँ शिक्षा का प्रचार अधिक हो रहा है। वहाँ दलित समाज उभर कर सामने आया है। उसे समान अधिकार दिये गए हैं। परन्तु राष्ट्र के कुछ हिस्सों में अब भी दलित समाज के साथ दुर्व्यवहार किया जाता है जिसे कवि सुभाष पंत ने अपने नाट्य–काव्य 'चिड़िया की आँख' में एक विद्रोही एवं संघर्षी समाज के रूप में चित्रित किया है। जिसमें राजतंत्र के प्रति विद्रोह है वह मिलकर एक नए संगठन का राजतंत्र के प्रति विद्रोह है कवि ने एकलव्य के शब्दों के माध्यम से दलित शक्ति को रूपायित किया है–

''दलितों को जोड़कर
बनायेगें एक नई शक्ति
जो नव निर्माण करेगी
समता पर आधारित।''[32]

कवि दर्शाना चाहता है कि जब साधारण जनता एवं शोषित वर्ग मिलकर विरोध करता है तो बड़ी से बड़ी राजतंत्र की शक्ति को भी खंडित करने की क्षमता रखता है। उस समय दलित समाज को उभारने के प्रयास किये जा रहे थे इसलिए स्वातन्त्र्योत्तर काव्यों में दलित समाज को उभारने का चित्र प्रस्तुत किया गया है।

वर्तमान समय में स्थिति इसके विपरीत है दलित समाज में आरक्षित श्रेणी में स्वतंत्रता प्राप्ति के समय इसलिए रखा गया था क्योंकि उस समय उनकी स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। उनको समाज में समता दिलाने के लिए दस वर्ष तक आरक्षित श्रेणी में रखा गया था परन्तु इसका लाभ वे आज भी उठा रहे है। शिक्षा के क्षेत्र में, सरकारी नौकरी के क्षेत्र में आरक्षण का लाभ उठाकर वे साधारण स्तर के व्यक्तियों से भी आगे निकल गए है जोकि साधारण स्तर के साथ अन्यायपूर्ण परिस्थितियाँ पैदा कर रहा है। स्त्री समाज के विषय में स्त्रियों को प्रोत्साहित करने के लिए नाट्य काव्यों में भरसक प्रयास देखने को मिलता है। नाट्य–काव्यों में चित्रित स्त्री आधुनिक स्त्री की भांति शोषण के विरूद्ध विद्रोह करती प्रतीत होती है। क्योंकि अब स्त्री आर्थिक रूप से सुदृढ़ बन चुकी है उसके अन्दर आत्मविश्वास बढ़ गया है वह अपने जीवन के फैसले स्वयं ले पा रही है तथा समाज में अपनी सक्रिय भूमिका निभा रही है। आज के काव्य में स्त्री के इसी स्वरूप को प्रकट किया जा रहा है। साहित्यकार समाज का सक्रिय सदस्य होने के कारण समाज के सभी पक्षों राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक आदि पर अपनी पैनी दृष्टि रखता है। अपने समय की परिस्थितियों के साथ–साथ उसकी दृष्टि भविष्य पर भी टिकी होती है। इसलिए रचनाकार भविष्य द्रष्टा कहा जाता है। स्वातन्त्र्योत्तर कवियों ने भी अपने नाट्य काव्यों में आर्थिक संत्रास के अनेक पहुलओं पर दृष्टिपात किया है।

---

[32] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आँख, पृ॰.35

6.6.1 विपन्न वर्ग के सन्दर्भ :

जब मनुष्य अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कठोर परिश्रम करके भी पर्याप्त धन नहीं कमा पाता है, तो वह निर्धन होता है अर्थात् जिसकी आर्थिक स्थिति दयनीय, सोचनीय हो, वह गरीब या विपन्न है। जिस घर में कमाने वाला एक हो एवं परिवार के सदस्य ज्यादा हो वहाँ भी मजदूरी करने वाले के लिए समस्या बन जाती है। 'चिड़िया की आँख' में कवि ने धनिक के माध्यम से उसकी विपन्नता एवं असमर्थता को प्रकट किया है। जब उसकी बेटी उससे अपने लिए हँसुली–टिकुली मँगाती है तो वह धन अभाव के कारण उसके लिए कुछ भी नहीं ला पाता। कवि ने आर्थिक विपन्नता का जैसा मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है वैसा अन्य कहीं देखने को नहीं मिलता। बूढ़ा धनिक बाजार से अपने बच्चों और पत्नी के लिए कुछ भी लाने में समर्थ नहीं है। सारा दिन मेहनत करने पर भी निम्न वर्ग भरपेट भोजन नहीं कर पाता। कवि ने बूढ़े धनिक के माध्यम से वर्तमान गरीब जनता की लाचारी एवं बेबसी को प्रत्यक्ष किया है –

''मैं असमर्थ था
वह कुछ भी नहीं ला पाया।''[33]

घाटी में रह रहे लोगों के माध्यम से कवि ने आज की अभावग्रस्त जनता को रूपायित किया है। वास्तव में धन का महत्व वही समझ सकते हैं जिनके पास खाने को अन्न नहीं है, तन ढकने के लिए वस्त्र नहीं हैं। सम्पन्न एवं समृद्ध व्यक्ति धन की आवश्यकता को समझ सकता है, उसके महत्त्व को नहीं। 'चिड़िया की आँख' नाट्य–काव्य में धनिक अपने परिवार के लिए बहुत कुछ करना चाहता है परन्तु वह लाचार एवं बेबस है। धनिक की भांति कवि ने बेबस माँ को भी चित्रित किया है। जो अपने बच्चों को रोटी खिलाने में असमर्थ है।

''क्या खिलाऊँ
शांत हो जिससे तुम्हारी भूख
कुछ भी नहीं है।''[34]

कवि ने राष्ट्र की विपन्नता को गहराई से चित्रित किया है। केवल राजकोष में धन संचित होने से राष्ट्र सम्पन्न नहीं होता है। कोई भी राष्ट्र जब तक कैसे सम्पन्न हो सकता है जब तक उसकी जनता गरीबी एवं भूखमरी से बेहाल है। सम्पन्नता की इस चकाचौंध में नेता उस गरीब जनता की तरफ कोई ध्यान नहीं देता जो हमारे राष्ट्र को समृद्ध बनाने में अपना भरपूर योगदान देती है और उन्हीं के प्रति शासक भावशून्य हो जाता है।

---

[33] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आँख, पृ॰.59
[34] वही पृ॰.16

निष्कर्षतः विपन्नता राष्ट्र के लिए अभिशाप है। यह हमारे राष्ट्र की जड़ों को खोखला कर रही है। भ्रष्टाचार एवं बेरोजगारी के कारण हमारा राष्ट्र जर्जरता की स्थिति को प्राप्त होता जा रहा है।

क. भ्रष्टाचार :

भ्रष्टाचार वर्तमान समय में शोणित की भांति हमारी नसों में फैल चुका है। स्वतन्त्र भारत में आर्थिक एवं औद्योगिक दृष्टि से देश का विकास हुआ, किन्तु अभी भी हमारा देश दुनिया के गरीब देशों में से एक माना जाता है। देश का पिछड़ापन देश की गरीबी से जुड़ा हुआ है। और गरीबी भ्रष्टाचार से सम्पृक्त है। धनवान एवं निर्धन की बढ़ती खाई, अकल्पनीय महंगाई तथा बेरोजगारी के साथ जुड़े नित नए रूपों का उल्लेख, स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य–काव्यों में हुआ है। 'चिड़िया की आँख' में निहित धनिक जब आर्थिक सहायता माँगने राजमहल जाता है तो उसे अछूत कहकर महल में प्रवेश नहीं करने दिया जाता है। अकाल एवं प्राकृतिक आपदाओं की मार थी गरीब तबगा सबसे अधिक झेलता है। राजभवनों में अन्न भण्डार भरे रहते हैं और गरीब जनता भूखमरी से मरती रहती है। इसी का वर्णन करते हुए धनिक आज के सत्य को प्रस्तुत करता है –

''अनुभव शुन्य है राजा, क्योंकि
राजभवन की दीवारों से टकरा कर अकाल की छाया
हम लोगों के बीच लौट आती है
धरती की माँग भरते जो अपनी मेहनत से
अंधियारा इन घाटियों में बसता है।
राजभवन में तो दीपक आलोकित थे।''[35]

भ्रष्टाचार के विरूद्ध की गई विद्रोह की आग राजा के कानों तक पहुँच जाती है परन्तु भूखी जनता की हुंकार राजनेता के कानों को सुनाई नहीं देती। यह आधुनिक समय का कटु सत्य बन गया है। अर्थ किसी भी व्यक्ति को स्वार्थी बना देता है। गुरू द्रोणाचार्य भी इसी अर्थ की चकाचौंध अपने गुरू होने का महत्व भूल भ्रष्टाचार में लिप्त हो जाते है। जिस शिक्षा द्वारा उसे मानवीय उत्थान की सुरक्षा का जिम्मा सौंपा गया था। परन्तु भ्रष्टाचार से संलिप्त होकर वह इतिहास का खलनायक बन गया। द्रोण राजगुरू होने के कारण एकलव्य को दलित कहकर अपना शिष्य बनाने से इंकार कर देता हैं। यहाँ कवि ने वर्तमान भ्रष्ट राजव्यवस्था को दर्शाया है। आज सरकारी महाविद्यालयों एवं विद्यालयों में भ्रष्ट राजनेताओं का हस्तक्षेप देखने को मिलता है। जिस कारण शिक्षा भी व्यापार बन चुकी है। शिक्षा न मिलने पर एकलव्य के ये शब्द कि द्रोण का विवेक राजकोष में गिरवी पड़ा है भ्रष्टाचार की चीत्कार को प्रदर्शित करते हैं।

---

[35] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आँख, पृ॰.17

माधवी महल में रहने के कारण राजतंत्र में फैली भ्रष्टाचार की बीमारी को गहराई से जानती है इसी कारण वह एकलव्य से कहती है –

''आचार्य तुम्हें शिक्षा नहीं देंगे
क्योंकि आश्रमों में तय होती है
राजतंत्र की कूटनीति।''[36]

वर्तमान समय में भी मनुष्य भ्रष्टाचार में संलिप्त अमानवीय ढंग से धन कमाने के प्रयत्नों में लग हुआ है। भ्रष्टाचार वर्तमान समय में समाज में इतनी गहराई तक फैला हुआ है कि उसे समाज से निकालना एक दुष्कर कार्य प्रतीत होता है।

'चिड़िया की आँख' की भांति 'शम्बूक' में भी भ्रष्टाचार का निरूपण है। भ्रष्ट अधिकारियों द्वारा सरकार द्वारा परिचालित योजनाओं का लाभ उस निम्न वर्ग तक नहीं पहुँच पाता जिसके लिए वास्तव में ये परियोजनाएँ लागू की जाती हैं। सरकार द्वारा दी गई किसी भी परियोजना का दस प्रतिशत लाभ ही निम्न वर्ग तक पहुँच पाता है। जबकि नब्बे प्रतिशत भ्रष्ट अधिकारी हजम कर जाते है। भ्रष्टाचार से त्रस्त एवं पीड़ित लोक समुदाय की शोषित अवस्था का निर्भीक अभिज्ञान कराते हुए कवि ने अपने भावों का उदगार इस प्रकार किया है –

''सुना है फैली हैं तुम्हारी
आयोजनों तक योजनाएं
यदि पहुँच पायी नहीं
भूखे जनों तक योजनाएँ
ये निरक्षर वन्य पिछड़े लोग
सहते रहेंगे कब तक यातनाएँ।''[37]

अधिकांश जनकल्याणकारी योजनाएँ देश के अन्त्प वर्ग तक नहीं पहुँच पाती। नितान्त निर्धन एवं बलहीन समुदाय पहले की भांति शासक द्वारा संस्थापित एवं संचालित जन कल्याणकारी योजनाओं की उपलब्धियों का अधिभाग प्राप्त नहीं कर पाता।

निष्कर्षतः स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य–काव्यों में भ्रष्टाचार से त्रस्त गरीब जन–जीवन का बड़ा मार्मिक चित्रण किया है। वर्तमान समय में भ्रष्टाचार एक ऐसी बिमारी बन चुका है जिसका इलाज संभव नहीं है। नाट्य–काव्यों में भ्रष्टाचार के रूप देखने को मिलते है परन्तु भ्रष्टाचार को समाप्त करने के प्रयासों को प्रदर्शित नहीं किया गया है।

---

[36] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आँख, पृ॰.46
[37] डॉ॰ जगदीश गुप्त, शम्भूक, पृ॰.29

ख. बेरोजगारी, मँहगाई एवं आजीविका के संदर्भ में शोषण :

बेरोजगारी एवं महँगाई आज की सर्वप्रमुख समस्याएँ बन चुकी हैं। हमारी सरकार स्वतन्त्रता से लेकर आज तक इन समस्याओं के उन्मूलन के लिए प्रयासरत रही है। परन्तु ये समस्याएँ कम होने की अपेक्षा और अधिक बढ़ती जा रही है। महँगाई देश के विकास की सबसे बड़ी बाधा बन चुकी है। महँगाई के इस दौर में गरीब व्यक्ति को दो समय का भोजन भी प्राप्त नहीं होता। महँगाई एवं बेरोजगारी के कारण आज गरीब और गरीब एवं अमीर अमीर और अमीर होता जा रहा है।

उच्च वर्ग एवं मध्यम वर्ग के लोग निम्न वर्ग की औरतों पर अपना अधिकार समझते हैं। वे उनकी गरीबी का लाभ उठाकर उनसे अनैतिक कार्य करवाते है। कई नाट्य काव्यों में आजीविका के संदर्भ में यौवन शोषण का स्पष्ट रूप परिलक्षित होता है। ये उनकी गरीबी का लाभ उठाकर उनके साथ जबरन शारीरिक संबंध बनाने की कोशिश करते हैं इसी अमानवीयता का चित्रण शम्बूक नाट्य काव्य में किया गया है भ्रष्ट अधिकारी आदिवासी औरतों पर अपनी मनमानी करते है उन पर अत्याचार करते है उनके साथ बुरा व्यवहार करते है वे भँवरों की भांति उनके आस–पास मण्डराते रहते हैं और उन्हें मानसिक एवं शारीरिक रूप से प्रताड़ित करते रहते है। इसीलिए कवि शासक राम से उनके उद्वार की कामना करता है –

''लीप गोबर से धुमैला धाम
साग–पात परोस देंगी राम।
पर इन्हें, संवेदना से हीन
नगरवासी समझते मृग–मीन।''[38]

संवेदनहीन नगर वासी वन्य औरतों को मात्र भोग्या वस्तु समझकर उनका उपयोग करते हैं। तथा मतलब निकल जाने पर उन्हें ठोकरे खाने के लिए वन में छोड़ देते हैं।

निष्कर्षतः धन अभाव के कारण निर्धन वर्ग का दिन–प्रतिदिन शोषण होता जा रहा है। पेट की आग उन्हें रोटी के लिए ऐसे अपराधिक कार्य करने पर मजबूर कर देती है। रोटी के लिए इनके साथ होने वाले अमानुषिक व्यवहार को भी वे गरीबी की मार के समान अपना नसीब समझकर झेल लेती है। शिक्षा अभाव के कारण वे अपने अधिकारों से वंचित रहते है।

ग. अर्थाभाव में चिकित्सा एवं विवाह की समस्या तथा संबधों में बिखराव :

आर्थिक दबाव का सबसे अधिक शिकार मध्यमवर्गीय तथा सामान्य वर्ग की स्थिति वाले परिवार हुए हैं, जिन्हें सीमित आय में अपनी गृहस्थी चलानी पड़ती है। वर्तमान समय में अर्थ के अभाव के कारण आपसी संबंधों में बिखराव की स्थिति उत्पन्न हो रही है। पति–पत्नी के संबंध,

---

[38] डॉ॰ जगदीश गुप्त, शम्बूक, पृ॰.31

माता–पिता के बच्चों से संबंध, स्वार्थो के कारण खोखले होकर धन की नींव पर टिके हुए हैं। धनाभाव में इनके संबंधों में बिखराव देखने को मिलता है। स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य काव्यों में धन अभाव के कारण संबंधों में बिखराव के अनेक पहुलओं को देखा जा सकता है। 'सूखा सरोवर' नाट्य–काव्य में छोटा राजा अपनी पुत्री का विवाह उसके प्रेमी से इसीलिए नहीं करता क्योंकि वह निर्धन परिवार से है। इसी की भांति दुष्यंत कुमार कृत नाट्य–काव्य में सती द्वारा शिव से विवाह करने पर दक्ष उससे अपने सारे संबंध तोड़ देता है क्योंकि शिव दक्ष के समान सम्पन्न एवं प्रतिष्ठित नहीं है। शंकर के पास अपार धन नहीं है इसलिए वह शंकर पर प्रत्यारोप करता है कि सती बालिका थी शिव ने उसको बहला–फुसला कर सती से विवाह किया है इसलिए मैं शिव को अपना जामाता मानने में अपना अपमान महसूस करता हूँ।

''मैं उसको संबंधी कहने में
खुद को अपमानित अनुभव करता हूँ।
क्या संबंधों का निर्माण
घृणा पर
हठ पर,
और अनिच्छा पर भी संभव हो सकता है।''[39]

जहाँ निर्धनता संबंधों के बिखराव का कारण बनती है वहीं गरीबी की मौत का कारण भी बन जाती है क्योंकि बीमार व्यक्ति धन अभाव के कारण समय पर इलाज ठीक प्रकार से नहीं करवा पाता। 'चिड़िया की आँख' नाट्य–काव्य में कवि ने इसी आर्थिक विवशता को प्रकट किया है। जब शोणभद्र अपने जख्मों के लिए उपचार की याचना करता है तो धनिक अपनी गरीबी प्रकट करते हुए कहता है –

''आपके घावों के लिए औषधि नहीं हैं
असमर्थ हैं
हम निर्धन अछूत
हमारे घाव तो ऐसे ही भर जाते हैं।
हमारे जीने–मरने का कोई अर्थ नहीं है।[40]

सुभाष पंत जी ने अपने नाट्य–काव्य 'चिड़िया की आँख' में अर्थाभाव में चिकित्सा की समस्या के साथ–साथ विवाह की समस्या को भी चित्रित किया गया है। जब गरीब युवती का विवाह मण्डल सजाया जाता है। तो राजा के सैनिक द्वारा गरीब युवती के साथ किया गया अभद्र व्यवहार वर्तमान समय में हो रहे बलात्कारों को चित्रित करता है। उदाहरण स्वरूप दिल्ली

---

[39] डॉ॰ दुष्यन्त कुमार, एक कंठ विषपायी, पृ॰.31
[40] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आँख, पृ॰.31

में हुआ निर्भया हत्याकाण्ड एवं रोहतक में नेपाली लड़की से हुआ दुर्व्यवहार इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। गरीबों के साथ हो रहे इस घृणित व्यवहार को स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य–काव्यों में स्पष्टतः परिलक्षित किया गया है।

निष्कर्षतः धन अभाव में व्यक्ति समाज में हेय दृष्टि से देखा जाता है। चिकित्सा के अभाव में जहाँ गरीब व्यक्ति तिल–तिल कर मर रहा है वहीं इसी कारण आपसी संबंधों में बिखराव भी देखने को मिलता है। वर्तमान समय में भी यह स्थितियाँ वैसी ही बनी हुई है। भौतिकतावादी वर्तमान युग में निर्धन की स्थिति और भी अधिक बदतर हो गई है।

6.6.2 सम्पन्न वर्ग के सन्दर्भ :

सम्पन्न वर्ग में बड़े–बड़े व्यापारी अफसर, ठेकेदार, पूँजीपति, राजनेता तथा जमींदार आते हैं। जिनका मुख्य ध्येय किसी भी प्रकार से अधिक से अधिक धन संचय करना होता है। आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न उच्च वर्गीय व्यक्ति सभी सुख सुविधाओं का भोग तो करते ही हैं, साथ ही वह समाज में निम्न वर्ग और मध्यम वर्ग पर अपना एकाधिकार भी समझता है और इन वर्गों का अनेक रूपों में शोषण भी करता है। उच्च वर्ग अधिक से अधिक शक्तिशाली एवं धनी होने के लिए समाज में जमाखोरी मिलावट, रिश्वत, भ्रष्टाचार काला धन्धा व गरीबों की सम्पत्ति हड़पने जैसे अनैतिक कार्यों को न केवल स्वयं करता है, अपितु मध्यवर्ग एवं निम्नवर्ग को भी अपने साथ मिलाने व उनके शोषण में विश्वास रखता है।

(क) **धन के प्रति अतिशय मोह –**

धन के प्रति मोह मनुष्य की एक सहज मनोवृति है। मनुष्य के पास चाहे कितना भी धन क्यों न हो, उसकी धन की लालसा कभी समाप्त नहीं हो सकती अपितु धन लालास के साथ–साथ उसकी इच्छाएं भी बढ़ती रहती है। अमीर लोग भी धन को ज्यादा से ज्यादा कमाने के लिए कोई भी अनुचित रास्ता अपनाने के लिए तैयार हो जाता है। धनी व्यक्ति अपनी साधन सम्पन्नता केवल खून पसीने के बलबूते नहीं है, बल्कि इसे बटोरने के लिए उन्होंने अनेक भ्रष्ट और अनैतिक हथकण्डे अपनाए हैं। इस वर्ग के लोग अधिक से अधिक सम्पन्न बनने की होड़ में कितनी हद तक गिर सकते हैं। इसका यथार्थ रूप, स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य काव्यों में प्रस्तुत किया गया है। एक कंठ विषपायी में दक्ष अपनी पुत्री सती द्वारा महादेव से विवाह करने पर स्वयं को समाज में अपमानित महसूस करता है। क्योंकि शिव उनकी नजर में एक निर्धन एवं पाखंडी है इसलिए दक्ष कहता है –

''उन दोनो ने केवल मेरी
बाह्म प्रतिष्ठा खंडित की है
उनकी आत्म प्रतिष्ठा का भ्रम तोडूंगा मैं।
यह यज्ञायोजन विराट

उनके अभाव का श्रीगणेश है।''[41]

उच्च वर्ग का धन के प्रति अतिश्य मोह उसे अनैतिक कार्यों में लिप्त करता है।

(ख) **निम्न एवं सामान्य वर्ग का शोषण तथा रिश्वतरखोरी एवं भ्रष्टाचार को बढ़ावा**

समाज में सम्पन्न वर्ग धन संचय के लोभ में निम्न व सामान्य वर्ग का शोषण करता है। स्वार्थमद में मस्त यह वर्ग श्रमिकों की ओर से विमुख होकर केवल धन कमाने और जनता से धन बटोरने में अपना कल्याण समझते हैं। आज समाज में व्यक्ति की पहचान उसके आर्थिक स्तर को देखकर की जाती है। सम्पन्नता की लालसा में कौरवों द्वारा पाण्डवों के लिए लाक्षागृह का निर्माण किया जाता है। स्वार्थी एवं भ्रष्टाचारी राजा षडयंत्रों का खेल खेलता है। वह राज्य पाने के लालच में निर्दोष भीलनी एवं उसके बच्चों को जिंदा जलाने का अमानुषिक खेल खेलता है। सम्पन्नता एवं सत्ता पाने की भूख मनुष्य को निम्न वर्ग के प्रति उदासीन बना देती है। इसी कारण पाण्डवों ने भीलनी एवं उसके परिवार को लाक्षागृह में जिंदा जला दिया :

''यह ऐसी भूख है
जिसका कोई अन्त नहीं कौरव
जिन्होंने ने पाण्डवों को
जीवित जलाने को
लाक्षागृह का निर्माण किया था
इसी भूख ने छीन लिया पाण्डवों का विवेक
जिन्होंने हाडमास की द्रौपदी को
ऐसे बाँट लिया
जैसे भूखे रोटी बाँटते हैं''[42]

इस प्रकार सम्पन्न व्यक्ति में नैतिक मूल्यों का पतन हो जाता है तथा वे अपने स्वार्थ से आगे कुछ भी सोचने की क्षमता खो देता है। सम्पन्न व्यक्ति और भी सम्पन्न बनने के लिए रिश्वतखोरी एवं भ्रष्टाचार को बढ़ावा देता है। वह सामान्य वर्ग का शोषण करता है तथा इससे समाज में अव्यवस्था का जन्म होता है।

6.7 नाट्य काव्यों में निहित आर्थिक यंत्रणा का मार्मिक चित्रण :–

आज के भौतिकता प्रदान समय में अर्थ वह तंत्र है जो प्रत्येक तंत्र को प्रभावित करता है अर्थ वह वस्तु जिससे व्यक्ति कभी संतुष्ट नहीं होता। चाहे वह कितना भी धन सम्पन्न क्यों न हो। आधुनिक समय में यह धन लोलुपता और आधिक बढ़ती जा रही है। धन के अभाव में व्यक्ति का जीवन नरकीय बन जाता है। वह अपनी छोटी–छोटी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए

---

[41] डॉ॰ दुष्यन्त कुमार, एक कंठ विषपायी, पृ॰.15
[42] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आँख, पृ॰.72

भी असमर्थ हो जाता है। आर्थिक रूप से निर्बल होने के कारण उसे अनेक यंत्रणाओं से गुजरना पड़ता है। इन्हीं आर्थिक यंत्रणाओं को रचनाकारों ने स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य काव्यों में चित्रित किया है। राजनीतिक दृष्टि से हमकों स्वतन्त्रता मिलने पर भी हम मानसिक दासता एवं भौतिक लिप्सा में लिप्त है। इसी भौतिक लिप्सा का परिचायक हमारा विदेशी अनुकरण है। स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य काव्यों में वर्तमान समय में व्याप्त आर्थिक तंत्र की त्रासद पीड़ा को स्वातन्त्र्योत्तर कवियों ने नजदीक से महसूस किया है। वर्तमान समय में शासक तथा सम्पन्न व्यक्ति केवल निजी स्वार्थों के विषय में सोचता है। शासकों को केवल पैसों की भूख होती है। परन्तु वास्तव में जो रोटी की भूख के लिए तरसता है वास्तव में जीवन की भूख उसी में होती है। इसलिए एक कंठ विषपायी में सर्वहत कहता है कि तुम जीवन की भूख का मतलब नहीं समझते हो :

''तुम कुछ नहीं समझते
बहुत भोले हो
जरूर भले आदमी हो
ऐसे ही लोगों में
जीवन की भूख हुआ करती है
हर भला आदमी
जरूर भूखा होता है।''[43]

दुष्यन्त कुमार ने जनता की आर्थिक स्थिति को दयनीय ढंग से प्रस्तुत किया है। इसमें सर्वहत के माध्यम से वर्तमान जनता की मनोस्थिति को प्रकट किया गया है। इसी भांति चिड़िया की आँख, नाट्य काव्य में घाटी के लोगों पर हो रहे अत्याचार के माध्यम से निम्न वर्ग की दयनीय स्थिति का कवि ने मार्मिक उद्घाटन किया है। अकाल की स्थिति में एक माँ अपने बच्चों की भूख शांत करने में असमर्थ दिखलाई पड़ती है। कवि ने इन शब्दों के माध्यम से एक माँ की बेबसी का चित्र प्रस्तुत किया है।

''इस चमड़ी के भीतर
रूधिर की सिर्फ पतली रेख है
पर तुम्हारे दाँत इतने पैने नहीं है।
जो चीर चमड़ी को कर सकें
लहूपान और करले अपनी भूख शांत ।''[44]

गरीब जनता की मेहनत से शासक सम्पन्न होते हैं। ग्रामीण जनता को शासकों द्वारा अछूत कहकर निकाल दिया जाता है। जनता कहती है कि हमारे द्वारा बनाए बर्तनों में खाना खाते है। गरीबों द्वारा उगाये गए अन्न को ग्रहण करते हैं। हमारे द्वारा बनाए गए वस्त्रों को

[43] डॉ॰ दुष्यन्त कुमार, एक कंठ विषपायी, पृ॰.67
[44] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आँख, पृ॰.16

धारण करते हैं और फिर भी हमें हेय दृष्टि से देखते हैं। हमारे द्वारा उगाये गए अन्न से इनका परिवार पेटभर भोजन करता है और हमारे बच्चे भूखे बैठे रहते हैं। इन पंक्तियों के माध्यम से कवि ने गरीब जनता का शोषण चित्रित किया है –

''हम मिट्टी के सच्चे आदमी
इस धरती को खोदते उगाते
बच्चे हमारे भूखे मरते।''[45]

किसान की वर्तमान स्थिति को कवि ने इन पंक्तियों के माध्यम से उद्घाटित किया है। वर्तमान समय में स्थान–स्थान पर किसान द्वारा आत्महत्या की जाने की खबर आए दिन अखबार एवं समाचार पत्रों में पढ़ने को मिलती है। माधवी राजभवनों में रहते हुए भी स्वयं को गुलाम समझती है। वहाँ से मुक्त होना चाहती है। इसी कारण एक दिन मौका पाकर वह शोणभद्र के साथ राजभवन से भाग जाती है। तथा भागने के बाद घाटी के लोगों के साथ अपना दुख साँझा करती है। वह कहती है कि केवल उनके साथ ही शोषण नहीं होता अपितु महलों में रह रहे छोटे कर्मचारियों के साथ भी प्रतिदिन शोषण होता है। राजा के भय से वे चुपचाप उस शोषण को सहते रहते हैं। शोषण के कारण ग्रामीणों की दशा दीन–हीन है। फिर भी उनमें दया, करूणा, साहस और प्रेम जैसे नैतिक गुण विद्यमान है। जबकि साधन सम्पन्न व्यक्ति में मानवता के सभी गुण समाप्त हो चुके हैं।

6.8 अमानवीय शोषण का निर्भीक उद्घाटन :–

स्वतन्त्रता के बाद सरकार ने अनेक समस्याओं को सुलझाया। परन्तु निर्धनता एक ऐसी समस्या बन गई जो आज तक भी अनसुलझ ही है। वर्तमान समय में भी हमारे समाज में ऐसे परिवार है जिनकों भर पेट भोजन नहीं मिलता। इस निर्धनता की समस्या के कारण हमारे देश में भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी एवं अनेक अपराध बढ़ गए हैं। गरीबों के साथ होने वाले अमानवीय व्यवहार के कारण गरीब व्यक्ति स्वयं को अभिशापित समझता है तथा वह इस अभिशप्त जीवन से बाहर निकलने के लिए अमानवीय कर्मों को अपनाता है। जिससे वह पूंजीपतियों के शोषण का शिकार होने से बच जाए। वर्तमान समय की शोषण की कुप्रवृत्तियों को पौराणिक प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त किया गया है। सुभाष पंत कृत 'चिड़िया की आंख' नाट्य काव्य में कवि ने इसी अमानवीय शोषण का निर्भीक उद्घाटन किया है। अकाल के कारण घाटी के लोगों की दयनीय दशा, भूख से बेहाल बच्चे, प्यास से दुखी वृद्ध तथा राजा के पास सहायता मांगने पर राजदरबार से अपमानित होकर लौटा धनिक वर्तमान समय की स्थितियों को प्रत्यक्ष करता है जो आज की निरकुंश शासन व्यवस्था का चित्राकन है। सत्ता मोह में शासक इतना अंधा हो

[45] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आँख, पृ॰.18

जाता है कि वह अपनी प्रजा के साथ अमानुषिक व्यवहार करने से भी पीछे नहीं हटता। इसी कारण अपने स्वार्थों के फलस्वरूप पाण्डवों द्वारा निषाद परिवार को जिंदा जला दिया जाता है

''सोते निर्दोषों को
पाण्डवों ने जिंदा जला दिया।''[46]

मानव होते हुए भी पाण्डवों ने ऐसा कुकृत्य किया है जो मानवता पर एक बदनुमा धब्बा है।

समता और शोषण मुक्ति के नाम पर स्थापित हुए राज्य और उनकी राज्य व्यवस्थाएं आज इतना क्रूर रूप धारण कर चुकी है कि आज पूरा व्यक्ति मूल्य व्यक्ति की सारी मर्यादा उस राज्य और राज्य व्यवस्था के नीचे दमित है। नरेश मेहता ने इसी अमानवीय स्थिति की अभिव्यक्ति की सच्चाई को युधिष्ठिर के मुख से व्यक्त किया है –

''राज्य व्यवस्था की नींव में
कराहते मनुष्य का होना
एक अनिवार्यता है अर्जुन ।''[47]

कवि नरेश मेहता के अनुसार इतिहास क्रूरताओं से भरा होता है। शासक वर्ग साधारण जन को मात्र भोग्य वस्तु मानता है। वह अपने कार्यो के लिए उसका उपयोग करता है परन्तु उसके नजदीक आने पर वही शासक उसे नीच समझने लगता है। कवि नरेश मेहता के अनुसार भी इतिहास सदा राजाओं, बर्बरों और क्रूरों का होता है। मामूली अनाम आदमी का इतिहास नहीं लिखा जाता :–

''इतिहास किसी भाषा का नाम नहीं
और न ही
किसी उदात्त मानवीय संबंधों का नाम
वह तो शक्ति के लिए किया गया
नितान्त अमानुषी रक्तदान है।''[48]

आजकल केवल स्वार्थी जयकारिता में रचा गया इतिहास आतंकित करने वाला तथा भयंकर होता है। कवि सुभाष पंत ने आधुनिक जनता को प्रदर्शित किया है जो अन्याय, अत्याचार एवं अमानवीयता के विरूद्ध प्रश्न करना जानती है तथा विरोध भी करती है। विरोध करने वालों को राजनेताओं द्वारा दबा दिया जाता है। जब घाटी के लोगों में चेतना जागृत होती

---

[46] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आँख, पृ॰.63
[47] डॉ॰ नरेश मेहता, महाप्रस्थान . पृ॰.108
[48] डॉ॰ नरेश मेहता, प्रवाद.पर्व . पृ॰.33

है तथा एकलव्य के संघर्ष से घाटी वालों को अपना हक मिलने की आशा नजर आती है तभी गुरू द्रोण द्वारा छल से एकलव्य का अंगूठा माँग कर उसके विद्रोह को दबा देता है –

''अपने छल से काट लिया अंगूठा
घोट दिया तीसरी शक्ति का गला
जो आदमी के लिए
अन्याय के विरूद्ध उठा।''[49]

एकलव्य के माध्यम से कवि ने वर्तमान संघर्षी व्यक्ति के शोषण को दर्शाया है वहीं नारी के प्रति अमानवीय शोषण को कवि ने द्रौपदी एवं ग्रामीण युवती के साथ हुए अमानुषिक अत्याचार के माध्यम से दर्शाया है। आज निर्धन व्यक्ति इतना संवेदनहीन हो गया है कि अपने सामने हो रहे अत्याचार को भी वह पत्थर की मूर्त के समान देखता रहता है परन्तु सम्पन्न वर्ग के विरूद्ध आवाज नहीं उठा पाता।

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य काव्यों में जहाँ अमानवीय शोषण को चित्रित किया गया है वहीं मनुष्य में समाप्त होती संवदेना एवं प्रेम को भी परिलक्षित किया है। साथ–साथ इस शोषण को समाप्त करने के लिए मनुष्य के अथक संघर्ष को भी रचनाकारों ने दर्शाया है।

6.8 श्रम शक्ति के आराधक नाट्य–काव्य :–

स्वतन्त्र्योत्तर नाट्य–काव्यों में शोषित वर्ग की आहत चेतना को उद्घाटित किया गया है। आधुनिक समय में पूंजीवादी साम्राज्य के विनाश की हुंकार साहित्य में गूंजने लगी। श्रम जीवी वर्ग को अपनी शक्ति का अंदाजा होने लगा। लक्ष्मी लाल कृत सूखा सरोवर में निम्न वर्ग की इसी दयनीय स्थिति को प्रकट किया गया है कि किस प्रकार गरीब जनता अपनी छाती पर लगे शासक के द्वारा दिये गए जख्मों को झेलती है। सन्यासी अपना दर्द व्यक्त करते हुए कहता है कि :–

''जितनी क्षति, जितने घाव बाहर है
उससे असंख्या गुणे भीतर छिपे हैं मेरे।''[50]

शासक का असहनीय अत्याचार ही प्रजा को शासक का विरोधी बना देता है। जिस अन्याय को व्यक्ति स्वीकार करता आया है वास्तविकता का बोध हो जाने पर उसी अन्याय के विरूद्ध आवाज उठाता है। शोषित वर्ग मूक बनकर अन्याय को सहन करता रहता है। परन्तु जब उसे उचित सत्य का आभास होता है तब वह अन्याय के विरूद्ध आवाज उठाता है और अपनी चुप्पी तोड़ देता है और पूंजीवादी साम्राज्य के विनाश की नींव रखी जाती है। जब शोषित मनुष्य की

[49] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आँख, पृ॰.100
[50] डॉ॰ लक्ष्मीनारायण लाल, सूखा सरोवर, पृ॰.45

सहनशक्ति जवाब देने लगती है। तो वह उसके सब्र की सीमाओं के बांध तोड़कर एक सुनामी के समान उफान लेती हुई आगे बढ़ती है। जिसमें पूंजीवादी वर्ग के साथ–साथ सत्ताधारी नेता भी बह जाते हैं। इसी शोषित वर्ग के विद्रोह को कवि लक्ष्मीनारायण लाल ने चेतना प्रदान की है

''मुझे चुप रहने देता
मत छेड़ता मेरे स्वर की टूंटी बांसुरी को
मन की बीणा रख दी थी कहीं
क्यों तूने छू दिया मुझे।''[51]

श्रमजीवी वर्ग आहत होकर प्रश्न उठाता है कि ऐसा क्यों होता है। हम धरती का सीना चीरकर सोना उगाते हैं और हमारे ही बच्चे भूख से व्याकुल भटकते हैं। हमारे श्रम का कुछ हिस्सा भी हम उपयोग नहीं कर पाते। वर्तमान समय में श्रमजीवी वर्ग की दशा ऐसी ही है। उसे अपने श्रम का कुछ प्रतिशत भी नहीं मिल पाता। सत्ताधारी नेताओं का वेतन प्रतिवर्ष कई गुणा बढ़ जाता है जबकि अन्न के भावों में निरन्तर गिरावट आती है। किसान पूरे वर्ष अपने खेत की मिट्टी में परिश्रम करता है और अकाल के समय उसे ही अन्न नहीं मिलता। इसलिए चिड़िया की आँख में धनिक कहता है कि राजतंत्र का पहिया अपंग है जिसकी दृष्टिपथ के आगे सिर्फ अंधकार है। श्रमजीवी वर्ग के शोषण एवं अपंगता को प्रदर्शित करते हुए कवि ने आधुनिक किसानों की दयनीय एवं कारूणिक दृष्टि पर प्रकाश डाला है –

''हमारा भ्रम
देता है हमे भूख, अपमान, शोषण, अत्याचार
और खड़ी करता है उनके अन्तपुर में
सोने की दीवार।''[52]

श्रमजीवी वर्ग राजनेताओं द्वारा बनाए गए ऊँच–नीच के मध्य दुर्ग को नहीं तोड़ पाता और जब तक उच्च निम्नता के मध्य के वर्ग को नहीं तोड़ा जाता तब तक समता का संदेश नहीं दिया जा सकता। इसलिए एकलव्य माधवी से कहता है कि तुर्कों से शोषण के दुर्ग नहीं तोड़े जा सकते क्योंकि शोषितों को बोलने का अधिकार नहीं है। उसके सामने राजतंत्र बहुत शक्तिशाली है। उसे तोड़ने के लिए हमें परिस्थितियाँ बदलनी होगी जब तक परिस्थितियाँ नहीं बदलेगी तब तक हमारे गले में शोषण का फंदा कसता ही जाएगा। हम सबको मिलकर एक नई शक्ति के रूप में नवनिर्माण कर समानता को लाना होगा।

निष्कर्षतः स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य काव्यों में आदमी के संघर्षों को वाणी प्रदान की गई है। मनुष्य में भाग्यवादी न बनाकर कर्मठतावादी होने की चेतना जागृत की है। समाज आर्थिक आधार पर नहीं कर्म–सिद्धान्त के आधार पर चलित होना चाहिए। सम्पन्नता एंव विपन्नता के

---

[51] वही पृ॰.56
[52] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आँख, पृ॰.24

भेद को मिटाकर ही समानता का विकास किया जा सकता है। शोषण के विरूद्ध जनता के स्वर को कवियों ने मुखरित किया है। वर्तमान जनता में दासता की प्रवृत्ति को मिलाने की पुनर्जोर कोशिश रचनाकारों ने अपने नाट्य–काव्यों से की है।

6.9 युद्धों का देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाला प्रभाव :–

राष्ट्र में होने वाले युद्ध का प्रभाव प्रत्येक राष्ट्र की धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों के साथ–साथ आर्थिक स्थिति पर भी पड़ता है। अंधा युग में युद्ध के पश्चात की आर्थिक विपन्नता एवं युद्ध पूर्व आर्थिक सम्पन्नता को दर्शाया है। युद्ध में भाग लेने वाले दोनो ही पक्षों में किसी का लाभ नहीं होता हे। दोनो पक्षों के साथ ऐसा खूनी संघर्ष आरम्भ होता है जो कभी समाप्त नहीं होता। ऐसे युद्धों के बाद समस्त परिवेश में समस्त मानव समाज में चारों और ऐसी गहरी उदासी छा जाती है। जैसी महाभारत युद्ध की अन्तिम संध्या, के समय कौरव–महलों के सूने गलियारे में छायी हुई थी। उन महलों की महाभारत युद्ध से पूर्व और युद्ध के पश्चात् की स्थिति पर संयुक्त रूप से प्रकाश डालते हुए कवि ने लिखा है –

''सूने गलियारे में
जिसके इन रत्न जटित फर्शों पर
कौरव वधुंए/मंथर–मंथर गति से
सुरभित पवन तरंगों सी चलती थी
आज वे विधवा हैं।''[53]

कवि ने इन विधवाओं की अभिशप्त स्थिति को रेखांकित करते हुए गांधारी के शब्दों में कहा है –

''अपने इन हाथों से
मैने उन फूलों सी वधुओं की कलाइयों से
चूड़ियाँ उतारी हैं।
अपने इस आंचल से
सेंदूर की रेखाएं पौंछी हैं।''[54]

उपर्युक्त दोनो कथनों के माध्यम से कवि ने युद्ध पूर्व राष्ट्र की सम्पन्नता एवं युद्ध के पश्चात राष्ट्र की दयनीय स्थिति का चित्रांकन किया है। धर्मवीर भारती द्वारा जहाँ युद्ध के पश्चात युद्ध की यंत्रणा को दर्शाया गया है वहीं दुष्यन्त कुमार कृत नाट्य काव्य एक कंठ विषपायी में युद्ध से पूर्व ही युद्ध के परिणामों पर चिंतन मनन किया गया है। शिव की सेना द्वारा नगर में आतंक मचाया हुआ है जिस कारण सम्पूर्ण नगर तहस नहस हो गया

[53] डॉ॰ धर्मवीर भारती, अंधा युग, पृ॰.24
[54] वही पृ॰.20

है। युद्धों में सम्पूर्ण नगर का नष्ट हो जाना राष्ट्र को आर्थिक रूप से रूग्ण कर देता है। आर्थिक रूप से स्थिति कमजोर होने के कारण राष्ट्र का विकास रूक जाता है। शासक वर्ग पर भले ही इसका प्रभाव कम पड़ता है। परन्तु साधारण जनता को ये आर्थिक रूप से पंगु बना देता है। दक्ष की नगरी सभी सुख सुविधाओं से भरपूर एवं संपन्न थी। यज्ञ विध्वंस में जहाँ एक तरफ जनता मारी गई वहीं सम्पूर्ण नगर नष्ट हो गया। जिस नगर में पहले यज्ञ आयोजन की तैयारी चल रही थी महल कंगूरे सजे हुए थे, युद्ध के पश्चात उसकी स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गई। सर्वहत के शब्दों के माध्यम से लेखक ने उसी स्थिति को परिलक्षित किया है –

''यहाँ कुछ भी नहीं है शेष
सारे नगर में ताजा जमा रक्त है,
सड़ी हुई लाशे हैं / मुड्डी हुई हड्डिया हैं
क्षत–विक्षत तन हैं / उन पर भिन्नाते हुए
चीलों और गिद्धों के झुण्ड और मक्खिया हैं।''[55]

दुष्यन्त कुमार कृत 'एक कंठ विषपायी' में पौराणिक शिव कथा का आधार ले मात्र, इतिवृत की पुनरावृति नहीं है वरन् इसमें समकालीन संदर्भों की प्रासंगिकता प्रतिपादित की गई है। युद्ध की शाश्वत समस्या का तार्किक आधार पर विश्लेषण किया गया है। भविष्य में युद्ध की समस्या सम्पूर्ण विश्व के लिए एक चुनौती बन चुकी है। यदि भविष्य में युद्ध हुआ तो देश आर्थिक रूप से पिछड़ जाएगा। इसके साथ ही राजनैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक रूप से पंगु हो जाएगा। युद्धों के कारण हुए आर्थिक नुक्सान का सबसे अधिक खामियाजा साधारण जनता को ही भुगतना पड़ता है। युद्ध के समय प्रेम, दया, धर्म, नैतिकता जैसे मानवीय मूल्यों का हनन तो होता ही है साथ ही देश आर्थिक रूप से पंगु बन जाता है। युद्ध में प्रजा अपना रक्त जिस राजा के लिए चाहती है वही राजा प्रजा के परिजनों के शवों पर अपना शासन करता है –

''युद्धों का बोझ
राजा नहीं प्रजा ढोती है।
युधिष्ठिर चक्रवर्ती सम्राट होकर
टूटी प्रजा के शव पर अट्हास करेगा।
कितना बड़ा है राजा का अहम्।''[56]

युद्ध के कारण हरे भरे प्रान्त नष्ट हो जाते हैं। माधवी कहती है कि मैं युद्ध से घृणा करती हूँ। युद्ध एक विनाश लीला है जिसमें सब कुछ नष्ट हो जाता है । वह एकलव्य को समझाती है कि यदि भविष्य में युद्ध हुआ तो हमारे द्वारा बनाया गया यह प्रान्त नष्ट हो जाएगा।

---

[55] डॉ॰ दुष्यन्त कुमार, एक कंठ विषपायी, पृ॰.45
[56] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आँख, पृ॰.77

''यह हरी भरी घाटी
जिसे तुम्हारे हाथों ने संवारा है
आदमियों के रक्त से भीग जाएगी
युद्ध लील जायेगा इसका भविष्य।''[57]

कविवर नरेश मेहता भी युद्ध एवं शांति के प्रश्नों पर चिंतन करते हुए संशय की एक रात नाट्य काव्य में युद्ध के दुष्परिणामों पर विचार विमर्श करते हैं। युद्ध समाप्त होने के बाद नए राज्य को जन्म देता है। परन्तु युद्ध अपने पीछे कैसी भयानकता छोड़ जाता है। इसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता। युद्ध कितनी स्त्रियों को विधवा, बच्चें को अनाथ कर जाता है। ऐसा जीवन बन जाता है कि व्यक्ति, दशाहीन, होने पर बाध्य हो जाता है। युद्ध उपरान्त इसी स्थिति को कवि ने अपने नाट्य काव्य में चित्रित किया है–

''प्रत्येक युद्ध
जिसमें एक राष्ट्र जन्म लेता है
कितनी स्त्रियों को विधवा
और बच्चों को अनाथ कर जाता है।''[58]

युद्ध में सब कुछ नष्ट होने पर राष्ट्र आर्थिक रूप से अपंग हो जाता है। युद्ध में सम्पूर्ण नगर, राष्ट्र ध्वस्त हो जाता है। इसी प्रलयकारी एवं विनाशकारी परिस्थितियों का चित्रण कवि सुमित्रानन्दन पन्त ने ध्वंसशेष में इस प्रकार किया है –

'' धू धू करता ताम्र व्योम, धू–धू जलती भू
धूं–धूं बलती दिशा, उबलता, धू–धूं सागर।''[59]

इससे कवि ने युद्धों में प्रयोग होने वाले परमाणु बमों से होने वाले महाविनाश को चित्रित किया है यदि भविष्य में युद्ध होता है तथा प्रमाणु बम का प्रयोग होता है तो सम्पूर्ण विश्व ही धू धू कर जल जाएगा। पृथ्वी नष्ट हो जाएगी। हिरोशिमा नागासाकी इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। जहाँ आज भी परमाणु बम की विनाश लीला स्पष्ट दिखाई पड़ती है। इनके अतिरिक्त एक कंठ विषपायी अंधायुग, प्रवाद पर्व, 'संशय की एक रात', 'चिड़िया की आँख', सूखा सरोवर आदि नाट्य काव्यों में भी युद्धों का आर्थिक स्थिति पर पड़ने वाला प्रभाव परिलक्षित होता है।

---

[57] डॉ॰ सुभाष पंत, चिडिया की आँख, पृ॰.97
[58] डॉ॰ नरेश मेहता, संशय की एक रात, पृ॰.10
[59] डॉ॰ सुमित्रानन्दन पंत, ध्वंस शेष, पृ॰.59

6.11 निष्कर्ष :

सामाजिक प्राणी होने के कारण अर्थ मानव की आवश्यकता है क्योंकि अर्थ के द्वारा मानव अपनी महत्वपूर्ण मूलभूत आवश्यकातओं को पूरा करने में समर्थ हो सकता है। अर्थ की हमारे जीवन में विविध भूमिकाएं हैं। आर्थिक आधार पर समाज भी सम्पन्न एवं विपन्न दो वर्गों में विभक्त हो गया है। किसी भी राष्ट्र की समृद्धि का आधार इसकी आर्थिक सम्पन्नता है। विश्व में अपना स्थान सुदृढ़ करने के लिए राष्ट्र को आर्थिक रूप से स्व्वं को मजबूत बनाना होगा। आर्थिक विषमता के कारण देश में बेरोजगारी, चोरी, आत्महत्या, बलात्कार, भ्रष्टाचार शोषण जैसे अपराधों को बढ़ावा मिल रहा है। स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य काव्यों में अर्थ के विभिन्न पक्षों पर चिंतन किया गया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ ही पूंजीवादी व्यवस्था के अभ्यदय के कारण ही हमारा राष्ट्र शोषित एवं शोषक दो वर्गो में विभाजित है जो राष्ट्र की उन्नति में बाधक बना हुआ है। स्वातन्त्र्योत्तर रचनाकारों ने इसी आर्थिक यंत्रणा का मार्मिक, चित्रण, अमानवीय शोषण का निर्भीक उद्घाटन एवं युद्धों का देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले प्रभावों को अपने नाट्य काव्यों में अभिव्यंजना प्रदान की है। अतः सामाजिक राजनीतिक, सांस्कृतिक समय बोध की भांति अर्थ विषयक समय बोध का जागृत होना अनिवार्य है। वर्तमान मनुष्य का बोध अर्थ के विषय में अधिक प्रखर हो चुका है।